पैसों का व्यवहार

'दादा' का गणित !

यह हम पैसे बढ़ाया करें तो कहाँ तक जायेंगे ? फिर मैं ने पैसों का हिसाब निकाला कि यहाँ पर इस दुनिया में किसी का पहला नंबर नहीं आया है। लोग कहते हैं कि ''फोर्ड का नंबर पहला है।'' पर चार साल के बाद किसी दूसरे का नाम सुनने में आता हो। अर्थात् किसी का नंबर टीकता नहीं है। बिना वजह यहाँ दौड़-धूप करें, उसका क्या अर्थ ? पहले घोड़े को इनाम मिलेगा, दूसरे-तीसरे को थोड़ा मिले और चौथे को तो दौड दौड कर मर जाने का! मैं ने कहा, ''इस रेसकोर्स में मैं क्यों उतरुँ ?'' तब ये लोग तो चौथा, पाँचवा, बारहवाँ या सौवाँ नंबर देंगे। तब हम किस लिए दौड दौड कर हाँफ मरें ? हाँफ हाँफ कर हारते नहीं लोग ? पहला आने के लिए दौड़ा और आया बारहवाँ, फिर कोई चाय भी नहीं पिलाये। आपको क्या लगता है ?

\- दादाश्री

ISBN 978-81-89933-18-0

दादा भगवान प्ररूपित

पैसों का व्यवहार

मूल गुजराती पुस्तक 'पैसा नो व्यवहार' (संक्षिप्त) का हिन्दी अनुवाद

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरूबहन अमीन

अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : श्री अजीत सी. पटेल
महाविदेह फाउन्डेशन
5, ममतापार्क सोसायटी, नवगुजरात कॉलेज के पीछे,
उस्मानपुरा, अहमदाबाद - ३८० ०१४, गुजरात.
फोन - (०७९) २७५४०४०८, २७५४३९७९
E-Mail : info@dadabhagwan.org

© All Rights reserved - Shri Deepakbhai Desai
Trimandir, Simandhar City,
Ahmedabad-Kalol Highway, Post - Adalaj,
Dist.-Gandhinagar-382421, Gujarat, India.

प्रथम आवृत्ति : २००० प्रतियाँ, सितम्बर २००७

भाव मूल्य : 'परम विनय' और
'मैं कुछ भी नहीं जानता', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : २० रुपये

लेज़र कम्पोज : दादा भगवान फाउन्डेशन, अहमदाबाद.

मुद्रक : महाविदेह फाउन्डेशन (प्रिन्टिंग डिवीज़न),
पार्श्वनाथ चैम्बर्स, नये रिजर्व बैन्क के पास,
इन्कमटैक्स, अहमदाबाद-३८० ०१४.
फोन : (०७९) ३०००४८२३

समर्पण

चैन कहीं ना मिले इस कलिकाल में,
आगमन लक्ष्मी का, बेचैनी दिन-रात में।
पेट्रोल नहीं पर आर.डी.एक्स की ज्वाला में,
पानी नहीं, उबल रहा लहु संसार में।
धर्म में लक्ष्मी का हो गया व्यापार है,
हर ओर चल रहा काला बाज़ार है।
उबाल चहुँ ओर, काल यह विकराल है,
बचाओ, बचाओ, सर्वत्र यह पुकार है।
ज्ञानीपुरुष की सम्यक् समझ ही उबार है,
निर्लेप रखती सभी को, पैसों के व्यवहार में।
संक्षिप्त समझ यहाँ हुई शब्दस्थ है,
आदर्श धन व्यवहार की सौरभ बहे संसार में।
अद्भूत बोधकला 'दादा' के व्यवहार में,
समर्पित है जग तुझ चरण-कमल में।

-डॉ. नीरूबहन अमीन

त्रिमंत्र

'दादा भगवान' कौन ?

जून १९५८ की एक संध्या का करीब छ: बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन। प्लेटफार्म नं. 3 की बेंच पर बैठे श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल रूपी देहमंदिर में कुदरती रूप से, अक्रम रूप में, कई जन्मों से व्यक्त होने के लिए आतुर 'दादा भगवान' पूर्ण रूप से प्रकट हुए। और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्‌भुत आश्चर्य। एक घंटे में उनको विश्व दर्शन हुआ। 'मैं कौन? भगवान कौन? जगत कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?' इत्यादि जगत के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए। इस तरह कुदरत ने विश्व के सन्मुख एक अद्वितीय पूर्ण दर्शन प्रस्तुत किया और उसके माध्यम बने श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल, चरोतर क्षेत्र के भादरण गाँव के पाटीदार, कान्ट्रैक्ट का व्यवसाय करनेवाले, फिर भी पूर्णतया वीतराग पुरुष!

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य मुमुक्षु जनों को भी वे आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्‌भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट और क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना।

आपश्री स्वयं प्रत्येक को 'दादा भगवान कौन?' का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ''यह दिखाई देनेवाले दादा भगवान नहीं है, वे तो 'ए.एम.पटेल' हैं। हम ज्ञानीपुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं। सभी में हैं। आप में अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और 'यहाँ' संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।''

'व्यापार में धर्म होना चाहिए, धर्म में व्यापार नहीं', इस सिद्धांत से उन्हों ने पूरा जीवन बिताया। जीवन में कभी भी उन्हों ने किसी के पास से पैसा नहीं लिया। बल्कि अपनी कमाई से भक्तों को यात्रा करवाते थे।

आत्मज्ञान प्राप्ति की प्रत्यक्ष लींक

'मैं तो कुछ लोगों को अपने हाथों सिद्धि प्रदान करनेवाला हूँ। पीछे अनुगामी चाहिए कि नहीं चाहिए? पीछे लोगों को मार्ग तो चाहिए न?'

– दादाश्री

परम पूजनीय दादाश्री गाँव-गाँव, देश-विदेश परिभ्रमण करके मुमुक्षु जनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे। आपश्री ने अपने जीवनकाल में ही पूजनीय डॉ. नीरूबहन अमीन (नीरूमाँ) को आत्मज्ञान प्राप्त करवाने की ज्ञानसिद्धि प्रदान की थी। दादाश्री के देहविलय पश्चात् नीरूमाँ वैसे ही मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति, निमित्त भाव से करवा रही थी। पूज्य दीपकभाई देसाई को दादाश्री ने सत्संग करने की सिद्धि प्रदान की थी। नीरूमाँ की उपस्थिति में ही उनके आशीर्वाद से पूज्य दीपकभाई देश-विदेशो में कई जगहों पर जाकर मुमुक्षुओं को आत्मज्ञान करवा रहे थे, जो नीरूमाँ के देहविलय पश्चात् जारी रहेगा। इस आत्मज्ञानप्राप्ति के बाद हजारों मुमुक्षु संसार में रहते हुए, जिम्मेदारियाँ निभाते हुए भी मुक्त रहकर आत्मरमणता का अनुभव करते हैं।

ग्रंथ में मुद्रित वाणी मोक्षार्थी को मार्गदर्शक के रूप में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो, लेकिन मोक्षप्राप्ति हेतु आत्मज्ञान पाना जरूरी है। अक्रम मार्ग के द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति आज भी जारी है, इसके लिए प्रत्यक्ष आत्मज्ञानी को मिलकर आत्मज्ञान की प्राप्ति करे तभी संभव है। प्रज्वलित दीपक ही दूसरा दीपक प्रज्वलित कर सकता है।

निवेदन

आत्मज्ञानी श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल, जिन्हें लोग 'दादा भगवान' के नाम से भी जानते हैं, उनके श्रीमुख से आत्मतत्त्व के बारे में जो वाणी निकली, उसको रिकार्ड करके संकलन तथा संपादन करके ग्रंथो में प्रकाशित की गई है। 'पैसों का व्यवहार' पुस्तक में लक्ष्मी संबंधी गूढ़ रहस्यों तथा आम व्यवहार में कैसे व्यवहारिक निराकरण लाये जाये उसके बारे में सारी बुनियादी बातें संक्षिप्त में संकलित की गई हैं। सुज्ञ वाचक के अध्ययन करते ही आत्मसाक्षात्कार की भूमिका निश्चित बन जाती है, ऐसा अनेकों का अनुभव है।

'अंबालालभाई' को सब 'दादाजी' कहते थे। 'दादाजी' याने पितामह और 'दादा भगवान' तो वे भीतरवाले परमात्मा को कहते थे। शरीर भगवान नहीं हो सकता है, वह तो विनाशी है। भगवान तो अविनाशी है और उसे वे 'दादा भगवान' कहते थे, जो जीवमात्र के भीतर है।

प्रस्तुत अनुवाद में यह ख्याल रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो। उनकी हिन्दी के बारे में उनके ही शब्द में कहें तो ''हमारी हिन्दी याने गुजराती, हिन्दी और अंग्रेजी का मिक्श्चर है, लेकिन जब 'टी' (चाय) बनेगी, तब अच्छी बनेगी।''

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वह इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसी हमारी नम्र विनती है।

अनुवाद संबंधी कमियों के लिए आप के क्षमाप्रार्थी हैं ।

संपादकीय

'अवैध (बिना हक्क, हराम) के विषय नर्क में ले जाये।'
'हराम की लक्ष्मी तीर्यंच में (पशुयोनि में) ले जाये।' -**दादाश्री**

संस्कारी घरों में हराम के विषय संबंधी जागृति कई जगहों पर प्रवर्तमान है लेकिन हराम की लक्ष्मी संबंधी जागृति पाना बहुत मुश्किल है। हक्र और हराम की लक्ष्मी की सीमा ही प्राप्त हो ऐसा नहीं है, उसमें भी इस भीषण कलीकाल में!

परम ज्ञानी दादाश्री ने अपनी स्याद्वाद देशना में आत्मधर्म के सर्वोत्तम चोटी के सभी स्पष्टीकरण दिये हैं, इतना ही नहीं, पर व्यवहार धर्म के भी उतनी ही उँचाई के स्पष्टीकरण दिये हैं। जिससे निश्चय और व्यवहार, इन दोनो पंखो से समान्तर मोक्षमार्ग पर उडा जाये! इस काल में व्यवहार में यदि सब से विशेष प्राधान्य मिला हो तो वह केवल पैसों को! और उन पैसों का व्यवहार जहाँ तक आदर्शता को प्राप्त नहीं होता, वहाँ तक व्यवहार शुद्धि संभव नहीं है। और जिसका व्यवहार दूषित हुआ, उसका निश्चय दूषित हुए बिना रहेगा ही नहीं! इसलिए पैसों के संपूर्ण दोष रहित व्यवहार का, इस काल को लक्ष में रखकर पूज्यश्री ने सुंदर विश्लेषण किया है। और ऐसा संपूर्ण दोष रहित और आदर्श लक्ष्मी का व्यवहार आपश्री के जीवन में देखने को मिला है, महा महा पुण्यवंतों को!

धर्म में, व्यापार में, गृहस्थ जीवन में, लक्ष्मी को लेकर स्वयं शुद्ध रहकर आपश्री ने संसार को एक अनोखे आदर्श का दर्शन कराया है। आपश्री का सूत्र, 'व्यापार में धर्म शोभा देगा मगर धर्म में व्यापार शोभा नहीं देता' यहाँ, दोनों की आदर्शता खोलकर दिखाई है! आपश्री ने अपने जीवन में निजी एक्सपेन्स (खर्च) के लिए कभी किसी का एक पैसा भी स्वीकार नहीं किया। खुद के पैसे खर्च कर गाँव गाँव सत्संग देने जाते, फिर चाहे ट्रेन से हो या प्लेन से हो! करोडों रुपये, सोने के अलंकार, आपश्री के आगे भाविकों ने धर दिये मगर आपश्री ने उनको छुआ तक नहीं। दान करने की जिन्हें बहुत ही उत्कट इच्छा होती उन लोगों को

लक्ष्मी सही रास्तों पर, मंदिर में या लोगों को भोजन कराने में व्यय करने को सूचित करते थे। और वह भी उस व्यक्ति की निजी आमदनी की जानकारी उनसे और उनके कुटुम्बीजनों के पास से चौकसी से प्राप्त करने के बाद, सभी की स्वेच्छा जानकर, बाद में 'हाँ' कहते!

संसार व्यवहार में पूर्णतया आदर्श रहनेवाला, संपूर्ण वीतराग पुरुष जैसा आज तक दुनिया ने देखा नहीं, ऐसा पुरुष इस काल में देखने में आया। उनकी वीतराग वाणी सहज प्राप्त हुई। व्यावहारिक जीवन में निर्वाह के लिए लक्ष्मी प्राप्ति अनिवार्य है, फिर वह नौकरी करके या धंधा करके या फिर अन्य किसी तरीके से हो, मगर कलियुग में धंधा करते हुए भी वीतरागों की राह किस तरह चला जाये, उसका अचूक मार्ग पूज्यश्री ने अपने अनुभव के निष्कर्ष द्वारा प्रकट किया है। दुनिया ने कभी देखा तो क्या कभी सुना भी नहीं हो ऐसा बेजोड साझेदारी का 'रोल' उन्हों ने दुनिया को दिखाया। आदर्श शब्द भी वहाँ वामन प्रतीत होता है क्योंकि आदर्श वह तो सामान्य मनुष्यों द्वारा अनुभव के आधार पर तय किया गया प्रमाण है, जब कि पूज्यश्री का जीवन तो अपवाद रूप आश्चर्य है!

व्यापार में साझेदारी छोटी उम्र से, २२ साल की उम्र से जिनके साथ की वह अंत तक उनकी संतानों के साथ भी आदर्श प्रणाली से उन्होंने यह साझेदारी निभाई। कान्ट्रैक्ट के धंधे में लाखों की आमदनी करते, पर नियम उनका यह था कि खुद नोन-मैट्रिक होकर नौकरी करे तो कितनी पगार मिले? पाँच सौ अथवा छः सौ। इसलिए उतने ही पैसे घर में आने देने चाहिए बाकी के व्यवसाय में रखना जिससे घाटे के समय में काम आये! और सारा जीवन इस नियम को समर्पित रहे! साझेदार के वहाँ बेटे-बेटीयों की शादी हो उसका खर्च भी आपश्री फिफ्टी-फिफ्टी पार्टनरशीप में करतें! ऐसी आदर्श साझेदारी वर्ल्ड में कहाँ देखने को मिलेगी?

पूज्यश्री ने धंधा आदर्श रूप से बेज़ोड तरीके से किया, फिर भी चित्त तो आत्मा प्राप्त करने में ही था। १९५८ में ज्ञानप्राप्ति के उपरान्त भी कई सालों तक धंधा चलता रहा। लेकिन खुद आत्मा में और मन-वचन-काया, जगत को आत्मा प्राप्त कराने हेतु गाँव-गाँव, संसार के कोने कोने में पर्यटन करने में व्यतित किया। वह कैसी अलौकिक दृष्टि संपन्न हुई कि जीवन में, व्यापार-व्यवहार और अध्यात्म दोनों 'एट-ए-टाइम' (एक ही समय) सिद्धि के शिखर पर रहकर संभव हुआ?

लोक संज्ञा का प्राधान्य ही लक्ष्मी है, पैसा ही ग्यारहवाँ प्राण माना जाता है। वह प्राण समान पैसों का व्यवहार जीवन में जो हो रहा है उसके संबंध में, आवन-जावन के, नफा-नुकसान के, टिकने के और अगले अवतार में साथ में ले जाने के जो मार्मिक सिद्धांत है और लक्ष्मी स्पर्शना के जो नियम है, उन सभी को, ज्ञान में देखकर और व्यवहार में अनुभव करके वाणी के द्वारा जो ब्योरा प्राप्त हुआ वह, 'पैसों का व्यवहार' इस ग्रंथ के स्वरूप में सुज्ञ पाठकों को जीवनभर सम्यक् जीवन जीने में सहायक होगा, यही अभ्यर्थना।

डॉ. नीरुबहन अमीन के
जय सच्चिदानंद

पैसों का व्यवहार

(१) लक्ष्मी का आवन-जावन

सारे संसार ने लक्ष्मी को ही प्रधानता दी है न! प्रत्येक कार्य में लक्ष्मी ही प्रधान है, इसलिए लक्ष्मी के प्रति ही ज्यादा प्रीति है। लक्ष्मी के प्रति ज्यादा प्रीति होने पर भगवान के प्रति प्रीति नहीं होगी। भगवान के प्रति प्रीति होने पर लक्ष्मी की प्रीति उड जायेगी। दोनों में से एक के प्रति प्रीति रहेगी, या तो लक्ष्मी के प्रति या तो भगवान के प्रति। आपको ठीक लगे वहाँ रहिये। लक्ष्मी के साथ शादी करने पर रँडापा अवश्य होगा। और नारायण के साथ, शादी भी नहीं और रँडापा भी नहीं, निरंतर आनंद में रखें, मुक्तभाव में रखें।

बात को समझनी होगी न? इस प्रकार खोखलापन कहाँ तक चलेगा? और अडचनें तो पसंद नहीं है। यह मनुष्य देह अडचनों से मुक्त होने के लिए है, केवल पैसा कमाने के लिए नहीं है। पैसे किस तरह कमाते होंगे? मेहनत से कमाते होंगे कि बुद्धि से?

प्रश्नकर्ता : दोनों से।

दादाश्री : यदि मेहनत से पैसे कमाते होते तो इन मज़दूरों के पास बहुत सारे पैसे होते। क्योंकि ये मज़दूर ही ज़्यादा मेहनत करते हैं न! और पैसे बुद्धि से कमाते होते तो ये सभी पंडित हैं ही न! लेकिन उनकी तो पीछे से आधी चप्पल भी घीस गई होती है! पैसे कमाना यह बुद्धि के खेल नहीं और ना ही मेहनत का परिणाम है। वह तो आपने पिछले जन्म में पुण्य किया है, उसके फल स्वरूप आपको प्राप्त होता है। और नुकसान,

वह पाप किया था, उसके फल स्वरूप है। लक्ष्मी, पुण्य और पाप के अधीन है। इसलिए यदि लक्ष्मी चाहिए तो हमें पुण्य-पाप का ध्यान रखना चाहिए।

लक्ष्मीजी तो पुण्यवान के पीछे ही घूमती रहती है और मेहनती लोग लक्ष्मीजी के पीछे घूमते रहते हैं। इसलिए हमें समझ लेना चाहिए कि पुण्य होगा तो लक्ष्मीजी पीछे आयेगी वरना मेहनत से तो रोटियाँ मिलेगी, खाना-पीना मिलेगा, और एकाध बेटी होगी तो ब्याहेगी। बाकी बिना पुण्य के लक्ष्मी नहीं मिलेगी।

इसलिए वास्तविकता क्या कहती है कि यदि तू पुण्यवान है तो क्यों छटपटाता है? और तू पुण्यवान नहीं है तब भी क्यों छटपटा रहा है?

पुण्यशाली भी कैसा? यह अमलदार को भी आफ़िस से अकुलाकर घर वापस आने पर उसकी पत्नी क्या कहेगी, 'डेढ़ घंटा लेट हुए, कहाँ गये थे?' यह देखो पुण्यशाली! पुण्यशाली के साथ क्या ऐसा होता है? पुण्यशाली को एक उलटी लहर भी नहीं छूती। बचपन से ही वह क्वालिटी (गुणवत्ता) अलग होगी। उसे अपमान का संयोग प्राप्त नहीं हुआ हो। जहाँ जाये वहाँ 'आइये आइये भाईजी' इस प्रकार परवरिश हुई हो (मान मिले)। और यह तो यहाँ टकराया, वहाँ टकराया (हर जगह अपमानित हो)। इसका क्या अर्थ है? फिर पुण्य की समाप्ति होने पर जैसा था वैसा हो जाये। तू पुण्यशाली नहीं है तो सारी रात पट्टी बाँधकर फिरे (ज्यादा मेहनत करे) तब भी क्या सबेरे पचास रुपये मिल जायेंगे? इसलिए छटपटाना नहीं। और जो कुछ मिला उसमें खा-पीकर पड़ा रहे चुपचाप।

लक्ष्मी (धन) अर्थात् पुण्यशाली लोगों का काम है। पुण्य का हिसाब ऐसा है कि, कड़ी मेहनत करे और कम से कम मिले वह बहुत ही कम, नाम मात्र का पुण्य कहलाये। शारीरिक मेहनत बहुत नहीं करनी पड़े और वाणी की मेहनत करनी पड़े, वकीलों की तरह, वह पहले की तुलना में थोड़ा अधिक पुण्य कहलाये। और उससे आगे क्या? वाणी की झंझट के बिना, शारीरिक झंझट के बिना, केवल मानसिक झंझट से कमाये

वह अधिक पुण्यशाली कहलाये। और उससे भी आगे क्या? संकल्प करते ही तैयार हो जाये। संकल्प किया यह मेहनत। संकल्प किया कि दो बंगले, एक गोदाम, ऐसा संकल्प करने पर तैयार हो जाये। वह महा पुण्यशाली। संकल्प किया, इतनी (वही) मेहनत, बस। संकल्प करना पड़ेगा, बिना संकल्प के नहीं होता।

संसार, वह बिना मेहनत का फल है। इसलिए भुगतो, किन्तु भुगतना भी आना चाहिए। भगवान ने कहा कि इस संसार में जितनी आवश्यक चीज़ें हैं उसमें यदि तुम्हें कमी हो तब स्वाभाविक रूप से दुःख होगा। इस वक्त हवा बंद हो गई हो और दम घुटता हो तो हम कहेंगे कि दुःख है इन लोगों को। दम घुटने जैसा वातावरण हो तब दुःख कहलायेगा। दोपहर होने पर दो-तीन बजे तक खाना नहीं मिले तो हम समझें कि इनको दुःख है कुछ। जिसके बगैर शरीर जी नहीं सके ऐसी आवश्यक चीज़ें, वे नहीं मिले तब वह दुःख कहलायेगा। यह सब तो है, विपुल मात्रा में है, पर उसे भुगतते भी नहीं और अन्य बातों में उलझे पड़े हैं। उसे भुगतते ही नहीं। क्योंकि एक मिल मालिक भोजन करने बैठता है तब बत्तीस तरह के पकवान होते हैं पर वह मूआ, मिल में होता है। सेठानी पूछे कि, 'पकौडे काहे के (कैसे) बने हैं?' तब कहे, 'मुझे मालूम नहीं। तू बार बार पूछा मत कर।' ऐसा सब है यह।

यह संसार तो ऐसा है। उसमें भोगनेवाले भी होते हैं और मेहनत करनेवाले भी होते हैं, सब मिला-जुला होता है। मेहनत करनेवाले ऐसा समझें कि यह 'मैं करता हूँ।' उनमें यह अहंकार होता है। जब कि भुगतनेवालों में यह अहंकार नहीं होता। पर तब इनको भोक्तापन का रस मिले (रस है)। मेहनत करनेवालों को अहंकार का गर्वरस मिले।

एक सेठ ने मुझ से कहा, 'मेरे लडके से कुछ कहिए न, मेहनत करता नहीं। चैन से गुलछर्रे उड़ाता है।' मैंने कहा, 'कुछ कहने जैसा नहीं है। वह अपने खुद के हिस्से का पुण्य भुगत रहा है उसमें हम क्यों दख़ल दें?' उस पर उस सेठ ने मुझ से कहा कि, 'उसे सयाना नहीं बनाना?' मैंने कहा, 'संसार में जो (भोग) भुगत रहा है वह सयाना कहलाये। बाहर फेंक दे, वह पगला कहलाये और मेहनत करता रहे वह तो मज़दूर कहलाये।' लेकिन मेहनत करता है उसे अहंकार का रस मिले न! अचकन (लम्बा कोट) पहनकर जाने पर लोग, सेठजी आये, सेठजी आये, करें, इतना ही केवल। और भुगतनेवाले को ऐसी कुछ सेठ-बेठ की परवाह नहीं होती। हमने तो हमारा भुगता उतना सही।

दुनिया का कानून ऐसा है कि, हिन्दुस्तान में जैसे जैसे बिना बरकत के मनुष्य पैदा होंगे वैसे लक्ष्मी बढ़ती जायेगी और जो बरकतवाला हो उसके पास रुपये नहीं आने देंगे। अर्थात् यह तो बिनबरकत के लोगों को लक्ष्मी प्राप्त हुई है, और टेबल पर भोजन मिलता है। केवल, कैसे खाना-पीना, यह नहीं आता।

इस काल के जीव भोले कहलाये। कोई ले गया तब भी कुछ नहीं। उच्च जाति, नीच जाति कुछ परवा नहीं। ऐसे भोले हैं इसलिए लक्ष्मी बहुत आये। लक्ष्मी तो, जो बहुत जागृत होगा उसे ही नहीं आयेगी। बहुत जागृत होगा वह बहुत कषाय करेगा। सारा दिन कषाय करता रहे। और यह (भोले) तो जागृत नहीं, कषाय ही नहीं न, कोई झंझट ही नहीं न! लक्ष्मी आये वहाँ, लेकिन खर्च करना नहीं आता। अचेतावस्था (बेहोशी) में जाती रहे सब।

यह धन जो है न वर्तमान में, यह सारा धन ही खोटा है। बहुत कम मात्रा में सच्चा धन है। दो तरह का पुण्य होता है, एक पापानुबंधी पुण्य कि जो अधोगति में ले जाये ऐसा पुण्य और जो उर्ध्वगति में ले जाये वह पुण्यानुबंधी पुण्य। अब ऐसा धन बहुत कम बचा है। वर्तमान में ये रुपये जो बाहर सब जगह दिखाई देते हैं न, वे पापानुबंधी पुण्य के रुपये हैं और वे निरे कर्म बाँधते हैं और भयंकर अधोगति में ले जा रहे हैं। पुण्यानुबंधी पुण्य कैसा हो? निरंतर अंतरशांति के साथ शान शौकत हो, वहाँ धर्म होता है।

आज की लक्ष्मी पापानुबंधी पुण्याई की है, इसलिए वह क्लेश कराये ऐसी है, उसके बजाय कम आये तो अच्छा। घर में क्लेश तो नहीं

पैठे। आज जहाँ जहाँ लक्ष्मी का प्रवेश होता है वहाँ क्लेश का वातावरण छा जाता है। एक रोटी और सब्जी भले हो मगर बत्तीस प्रकार के व्यंजन काम के नहीं। इस काल में यदि सच्ची लक्ष्मी आये तब एक ही रुपया, अहोहो....कितना सुख देकर जाये! पुण्यानुबंधी पुण्य तो घर में सभी को सुख-शांति देकर जाये, घर में सभी को धर्म के ही विचार रहा करें।

मुंबई में एक उच्च संस्कारी परिवार की बहन से मैंने पूछा, 'घर में क्लेश तो नहीं होता न?' तब वह बहन कहती है, 'रोजाना सवेरे क्लेश के नाश्ते होते हैं!' मैंने कहा, 'तब तो तुम्हारे नाश्ते के पैसे बच गये, नहीं?' बहन ने कहा, 'नहीं, फिर भी निकालने पड़े, पाव को मक्खन लगाते जाना!' तब क्लेश भी होता रहे और नाश्ता भी चलता रहे, अरे, किस प्रकार के आदमी हो?!

सदैव, यदि लक्ष्मी निर्मल होगी तो सब अच्छा रहे, मन चंगा रहे। यह लक्ष्मी अनिष्ट आई है उस से क्लेश होता है। हमने बचपन में तय किया था कि हो सके वहाँ तक खोटी लक्ष्मी पैठने ही नहीं देना। इसलिए आज छियासठ साल होने पर भी खोटी लक्ष्मी पैठने ही नहीं दी, इसके कारण तो घर में किसी दिन क्लेश उत्पन्न हुआ ही नहीं। घर में तय किया था कि इतने पैसों से घर चलाना। धंधे में लाखों की कमाई हो, मगर यह 'पटेल' सर्विस करने जाये तो तनख्वाह क्या मिलती? ज्यादा से ज्यादा छः सौ-सात सौ रुपये मिले। धंधा, यह तो पुण्याई का खेल है। इसलिए नौकरी में मिले उतने पैसे ही घर में खर्च कर सकते हैं, शेष तो धंधे में ही रहने देने चाहिए। इन्कमटैक्सवाले का कागज आने पर हम कहे कि, वह (५क्ठ ॠद्धह ुश्ठि°) रकम थी वह भर दो। कब कौन सा अटैक आयेगा (मुसीबत) उसका कोई ठिकाना नहीं। और यदि वह पैसे खर्च खायें और इन्कमटैक्सवाले का अटैक आने पर हमें यहाँ वह दूसरा (हार्ट) 'अटैक' आ जाये। सब जगह अटैक घुस गये हैं न? इसे जीवन कैसे कहा जाये? आपको क्या लगता है। भूल महसूस होती है कि नहीं? इसलिए हमें भूल सुधारनी है।

लक्ष्मी सहज भाव से प्राप्त होती हो तो होने देना। लेकिन उस पर

आधार नहीं रखना। आधार रखकर 'चैन' से बैठने पर कब आधार खिसक जाये, यह कह नहीं सकते। इसलिए सम्हलकर चलिये कि जिससे अशाता वेदनीय में चलायमान नहीं हो जायें।

प्रश्नकर्ता : सुगन्धीवाली लक्ष्मी कैसी होती है?

दादाश्री : वह लक्ष्मी हमें जरा-सी भी चिंता नहीं कराती। घर में सिर्फ सौ रुपये होने पर भी हमें जरा-सी भी चिंता नहीं करवाये। कोई कहेगा कि कल से शक्कर का कंट्रोल (अंकुश) आनेवाला है, फिर भी मन में चिंता नहीं होगी। चिंता नहीं, हाय-हाय नहीं। वर्तन कैसा खुशबूदार, वाणी कैसी खुशबूदार, और उसे पैसे कमाने का विचार ही नहीं आता ऐसा पुण्यानुबंधी पुण्य होगा। पुण्यानुबंधी पुण्यवाली लक्ष्मी होगी उसे पैसे पैदा करने के विचार ही नहीं आयेंगे। यह तो सब पापानुबंधी पुण्य की लक्ष्मी है। इसे तो लक्ष्मी ही नहीं कह सकते! निरे पाप के ही विचार आते रहें, 'कैसे इकट्ठा किया जाये, कैसे इकट्ठा किया जाये' यही पाप है। कहते हैं कि पहले के जमाने में सेठों के यहाँ ऐसी पुण्यानुबंधी पुण्य की लक्ष्मी हुआ करती थी। वह लक्ष्मी जमा होती थी, जमा करनी नहीं पड़ती थी। जब कि इन लोगों को तो जमा करनी पड़ती है। वह लक्ष्मी तो सहज भाव से आया करे। खुद ऐसी प्रार्थना करे कि, 'हे प्रभु! यह राजलक्ष्मी मुझे स्वप्न में भी नहीं चाहिए' फिर भी वह आती ही रहे। वे क्या कहें कि आत्मलक्ष्मी हो मगर यह राजलक्ष्मी हमें स्वप्न में भी नहीं हो। फिर भी वह आती रहे, वह पुण्यानुबंधी पुण्य।

हमें भी संसार में अच्छा नहीं लगता था। मेरा वृतांत ही कहता हूँ न! मुझे स्वयं किसी चीज़ में रस ही नहीं आता था। पैसा दें तब भी बोझ-सा लगता। मेरे अपने रुपये दें तब भी भीतर बोझ महसूस होता था। ले जाने पर भी बोझ लगे, लाने पर भी बोझ लगे। हर बात में बोझ लगे, यह ज्ञान होने के पहले।

प्रश्नकर्ता : हमारे विचार ऐसे हैं और धंधे में भी इतने मशगूल हैं कि लक्ष्मी का मोह जाता ही नहीं, उसमें डूबे हैं।

दादाश्री : इसके बाद भी पूर्ण संतोष होता नहीं न! मानो पच्चीस लाख इकट्ठे करूँ, पचास लाख इकट्ठे करूँ, ऐसा रहा करता है न?!

ऐसा है, पच्चीस लाख इकट्ठे करने में तो मैं भी पड़ता मगर मैंने हिसाब निकालकर देखा कि यहाँ आयुष्य का ऐक्सटेन्शन मिलता नहीं है। सौ के बजाय हजार साल जीने का होता तो मानो ठीक था कि मेहनत की वह काम की। यह तो आयुष्य का कोई ठिकाना नहीं है।

एक स्वसत्ता है, दूसरी परसत्ता। स्वसत्ता कि जिस में स्वयं परमात्मा हो सकता है। जब कि पैसे कमाने की सत्ता आपके हाथ में नहीं, वह परसत्ता है, तब पैसे कमाना अच्छा कि परमात्मा होना अच्छा? पैसे कौन देता है यह मैं जानता हूँ। पैसे कमाने की सत्ता खुद के हाथों में होने पर झगड़ा करके भी कहीं से लेकर आये, पर वह परसत्ता है। इसलिए चाहे सो कीजिए तब भी कुछ होनेवाला नहीं है। एक आदमी ने पूछा कि लक्ष्मी किसके जैसी है? तब मैंने कहा कि नींद के जैसी। किसी को सोते ही तुरन्त नींद आ जाती है और किसी को सारी रात करवटें बदलते रहने पर भी नींद नहीं आती, और कई तो नींद लाने के लिए गोलियाँ खाते हैं। अर्थात् यह लक्ष्मी आपकी सत्ता की बात नहीं है, वह परसत्ता है। और हमें परसत्ता की चिंता करने की क्या जरूरत?

इसलिए हम आप से कहते हैं कि चाहे कितनी भी माथापच्ची (झंझट) करोगे तो भी पैसे मिले ऐसा नहीं है। वह 'इट हेपन्स' (हो रहा है) है। हाँ, और आप उसमें निमित्त हैं। कोर्ट में आना-जाना यह निमित्त है। आपके मुँह से वाणी निकलती है वह सब निमित्त है। इसलिए आप इस में बहुत ध्यान नहीं दें, अपने आप ध्यान दिया ही जायेगा और इसमें आपको हरकत हो, ऐसा नहीं है।

यह तो मन में ऐसा समझ बैठे हैं कि, मेरे नहीं होने पर चलेगा ही नहीं। ये कोर्ट बंद हो जायेगी ऐसा समझ बैठे हैं। मगर ऐसा कुछ नहीं है।

यह लक्ष्मी प्राप्त हो इसके लिए भी कितने ही कारण साथ में मिलें तब वह लक्ष्मी प्राप्त हो ऐसा है। किसी डाक्टर के फादर को यहाँ गले

में खखार सट (फँस) गया हो तब डाक्टर से कहें कि इतने बड़े-बड़े आपरेशन किये तो यह खखार निकाल दो न! तब कहेगा, 'नहीं। निकालूँगा उससे पहले मर जायेंगे।' अर्थात् इसमें इतना भी चलेगा नहीं। 'एविडन्स' जमा हुए, सभी! मैं ज्ञानी हुआ वह तो 'सायन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स' के आधार पर। ये लोग करोडपति भी स्वयं नहीं हुए। लेकिन मन में समझते हैं कि 'मैं हुआ', इतनी ही भ्रांति है। और ज्ञानी पुरुष को भ्रांति नहीं होती। जैसा हो वैसा कह दें कि, 'भाई ऐसा हुआ था। मैं सुरत के स्टेशन पर बैठा था और ऐसा हो गया।' और वह (करोडपति) समझे कि मैं दो करोड कमाया! लेकिन यह सब आप लेकर आये हैं। यह तो मन में समझ बैठे हो कि, 'नहीं, मैं करता हूँ' उतना ही है। यह इगोइज्म है और वह इगोइज्म क्या करता है? (इस इगोइज्म के आधार पर) आप अगले (जन्म) अवतार की अपनी योजना बना रहे हो। ऐसे, अवतार के पीछे अवतार की योजना बनाता ही रहता है जीव, इसलिए उसके अवतार पर कभी रोक नहीं लगती। योजना बंद हो जाये तब उसकी मोक्ष में जाने की तैयारी होगी।

एक भी जीव ऐसा नहीं होगा कि जो सुख नहीं खोजता हो! और वह भी कायम का (स्थायी) सुख खोजता है। वह ऐसा समझता है कि लक्ष्मी में सुख है, लेकिन उसमें भी फिर अंदर जलन पैदा होती है। जलन होना और कायम का सुख प्राप्त होना वह किसी दिन हो ही नहीं सकता। दोनों विरोधाभास है, इसमें लक्ष्मीजी का कसूर नहीं। उनका अपना ही कसूर है।

संसार की सारी चीज़ें भले एक दिन अप्रिय हो जाये, पर आत्मा तो खुद का स्वरूप ही है, वहाँ दुःख ही नहीं होता। संसार में तो, पैसे देता हो, वह भी अप्रिय हो जाये। कहाँ रखना फिर (पैसे को), चिंता होने लगे।

अर्थात् पैसे होने पर भी दुःख, नहीं होने पर भी दुःख, बड़े मंत्री भी हुए तब भी दुःख, गरीब हो तब भी दुःख। भिखारी होने पर भी दुःख, विधवा को दुःख, सधवा को दुःख और सात मर्दवाली को दुःख। दुःख,

दुःख और दुःख। अहमदाबाद के सेठ लोगों को भी दुःख। क्या कारण होगा इसका?

प्रश्नकर्ता : उन्हें संतोष नहीं।

दादाश्री : इसमें सुख था ही कहाँ पर? सुख था ही नहीं इसमें। यह तो भ्रांति से प्रतीत होता है। जैसे किसी शराबी का एक हाथ गटर में पड़ा हो तब भी कहेगा, हाँ भीतर ठंडक महसूस होती है। बहुत अच्छा है, वह शराब की वजह से लगता है। बाक़ी इसमें सुख होगा ही कहाँ पर? यह तो निरी जूठन है सब।

इस संसार में सुख है ही नहीं। सुख होगा ही नहीं और सुख होता तब तो मुम्बई ऐसा नहीं होता। सुख है ही नहीं। यह तो भ्रांति का सुख है और वह भी टेम्परररी एडजस्टमेन्ट है केवल।

धन का बोझ रखने जैसा नहीं। बैंक में जमा होने पर चैन की साँस ले, और जाने पर दुःख हो। इस संसार में कुछ भी संतोष लेने जैसा नहीं है, क्योंकि टेम्परररी है।

मनुष्य को क्या दुःख होता है? एक व्यक्ति ने मुझसे कहा, कि मेरा बैंक में कुछ नहीं। बिलकुल खाली हो गया। नादार हो गया। मैंने पूछा, 'कर्ज़ कितना था?' वह कहे, 'कर्ज़ नहीं था।' तब नादार नहीं कहलाये। बैंक में हजार दो हजार रुपये जमा हैं। फिर मैंने कहा, 'वाइफ तो है न?' उसने कहा कि वाइफ थोड़े ही बेची जायेगी? मैंने कहा, 'नहीं, लेकिन तेरी दो आँखें है, वे तुझे दो लाख में बेचनी है?' ये आँखें, ये हाथ, पैर, दिमाग़ इन सब मिल्कियत की तू क़ीमत तो लगा। बैंक में पैसा नहीं होने पर भी तू करोडपति है। तेरी कितनी सारी मिल्कियत है, उसे बेच दे, चल। ये दो हाथ भी तू नहीं बेचेगा। बेशुमार मिल्कियत है तेरी। इन सब को मिल्कयत समझकर तुझे संतोष रखना चाहिए। पैसे आये कि न आये लेकिन वक्त पर भोजन मिलना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : जीवन में आर्थिक परिस्थिति कमज़ोर हो तब क्या करना?

दादाश्री : एक साल बारिश नहीं होने पर किसान क्या कहते हैं कि हमारी आर्थिक स्थिति खतम हो गई। ऐसा कहते हैं कि नहीं कहते? फिर दूसरे साल बारिश होने पर उसका सुधर जाये। अर्थात् आर्थिक स्थिति कमज़ोर हो तब धैर्य रखना चाहिए। खर्च कम कर देना चाहिए और किसी भी रास्ते मेहनत, प्रयत्न अधिक करने चाहिए। अर्थात् कमज़ोर परिस्थिति होने पर ही यह सब करना, बाक़ी परिस्थिति अच्छी होने पर तो गाडी अपने आप चलती रहे।

इस देह को जरूरत के अनुसार खुराक ही देने की आवश्यकता है, उसे और कुछ आवश्यक नहीं, और नहीं तो फिर ये त्रिमंत्र हर रोज घंटाभर बोलिये न! यह बोलने पर आर्थिक परिस्थिति सुधर जायेगी। उसका उपाय करना चाहिए। उपाय करने पर सुधर जायें। आपको यह उपाय पसंद आयेगा?

इस दादा भगवान का एक घंटा नाम लेने पर पैसों की बारिश होगी। लेकिन ऐसा करते नहीं न, बाकी हजारों लोगों को पैसे आये हैं। हजारों लोगों की अड़चन गई। 'दादा भगवान' का नाम लें और काम नहीं हो तब वे 'दादा' नहीं। लेकिन ये लोग इस प्रकार नाम लेते नहीं न!

लक्ष्मी तो कैसी है? कमाने में दुःख, सँभालने में दुःख, रक्षण करते दुःख और खर्च करने में भी दुःख। घर में लाख रुपये आने पर उसे संभालने की झंझट होने लगे। किस बैंक में इसकी सेफसाइड (सलामती) है यह खोजना होगा और सगे-संबंधी को मालूम होते ही तुरंत दौड़े आये। मित्र सब दौड़े आये, कहने लगे, 'अरे यार मेरे पर इतना भी यक़ीन नहीं? केवल दस हजार की जरूरत है', तब फिर ज़बरदस्ती देना पड़े। यह तो, पैसों का भराव हो तब भी दुःख और तंगी हो तब भी दुःख। यह तो नोर्मल हो वही अच्छा वरना फिर लक्ष्मी खर्च करने पर भी दुःख हो।

हमारे लोगों को तो लक्ष्मी को सँभालना नहीं आता और भोगना भी नहीं आता। भोगते समय कहेंगे कि इतना ज्यादा महँगा? इतना महँगा कैसे लें? अबे चुपचाप भोग ले न! लेकिन भोगते समय भी दुःख, कमाते

भी दु:ख। लोग परेशान करते हों उसमें कमाना, कई तो उगाही के पैसे नहीं देते। इसलिए कमाते भी दु:ख और सँभालते भी दु:ख। सँभाल सँभाल करने पर भी बैंक में रहते ही नहीं न! बैंक खाते का नाम ही क्रेडिट और डेबिट, पूरण (जमा) और गलन! लक्ष्मी जाये तब भी बहुत दु:ख दे!

कई लोग तो इन्कमटैक्स पचाकर बैठ गये होते हैं। पच्चीस-पच्चीस लाख दबाकर बैठे गये होते हैं। लेकिन वे जानते नहीं कि सभी रुपये जाते रहेंगे। फिर इन्कमटैक्सवाले नोटिस देंगे तब रुपये कहाँ से निकालेंगे? यह तो निरा फँसाव है। इस तरह ऊपर चढें हुए की भारी जोखिमदारी है पर वह जानता ही नहीं न! उलटे सारा-दिन किस तरह इन्कमटैक्स बचाएँ, यही ध्यान। इसलिए ही हम कहते हैं न कि ये तो तिर्यंच (जानवर गति) का रिटर्न टिकट लेकर आये हैं!

सारे संसार की मेहनत (कोल्हू के बैल की तरह) घान निकाल निकालकर व्यर्थ जाती है, वहाँ बैल को खली दें, जब कि यहाँ बीवी हाँडवे का ढेला दें, ताकि चले, सारा दिन बैल की तरह घान निकाल निकाल करता है।

अहमदाबाद के सेठों को दो-दो मिलें हैं फिर भी उनके ऊमस (तनाव)का यहाँ पर वर्णन नहीं कर सकें ऐसा है। दो दो मिलें होने पर भी वे कब फेइल हो जायें यह नहीं कह सकते। स्कुल में अव्वल दर्जे में पास हुए थे पर यहाँ फेइल हो जायें। क्योंकि उन्होंने बेस्ट-फुलिशनेस शुरू की है। 'डीसऑनेस्टी इस ध बेस्ट फुलिशनेस'! (अप्रामाणिकता सर्वोपरि मूर्खता है।) इस फूलिशनेस (मूर्खता) की कोई तो हद होगी न? या फिर सारी हदें पार कर के बेस्ट तक पहूँचना? तभी आज बेस्ट फूलिशनेस तक पहुँचे!

मैंने पैसों का हिसाब लगाया था। अगर हम पैसे बढ़ाया करें तो कहाँ तक पहुँचेंगे? इस दुनिया में किसी का हमेशा पहला नंबर नहीं आया है। लोग कहते हैं कि 'फोर्ड का नंबर पहला है।' पर चार साल के बाद

किसी दूसरे का नाम सुनने में आता है। अर्थात् किसी का नंबर टिकता नहीं है। बिना वज़ह यहाँ दौड़-धूप करें, उसका क्या अर्थ ? रेस में पहले घोड़े को इनाम मिलता है, दूसरे-तीसरे को थोड़ा मिलता हैं और चौथे को तो दौड़ दौड़ कर मर जाने का! मैंने कहा, ''इस रेसकोर्स में मैं क्यों उतरुँ?'' तब ये लोग तो मुझे चौथा, पाँचवा, बारहवाँ या सौवाँ नंबर देंगे। तो फिर हम किस लिए दौड दौड कर हाँफें ? क्या हारते नहीं लोग? पहला आने के लिए दौड़ा और आया बारहवाँ, फिर कोई हमसे पूछे तक नहीं।

लक्ष्मी लिमिटेड है और लोगों की माँग 'अनलिमिटेड है!' किसी को विषय की अटकन (मूर्छा रूपी बाधा) होती है, किसी को मान की अटकन पड़ी हो, ऐसी तरह तरह की अटकन (मूर्छा रूपी बाधायें) पड़ी होती है। अर्थात् इस तरह पैसों की अटकन पड़ी होती है, इसलिए सुबह उठा तब से पैसे का ध्यान रहा करे। यह भी बड़ी अटकन कहलाये।

प्रश्नकर्ता : लेकिन पैसे के बगैर चलता नहीं न!

दादाश्री : चलता नहीं, मगर पैसे किस तरह आते हैं यह लोग जानते नहीं और पीछे दौड-दौड करते हैं। पैसे तो पसीने की तरह आते हैं। जैसे किसी को पसीना ज्यादा आता है और किसी को कम आये लेकिन पसीना आये बिना नहीं रहता, इस प्रकार यह पैसे लोगों को आते ही हैं।

मुझे तो मूलत: पैसे की अटकन ही नहीं थी। बाईस साल का था तब से मैं धंधा करता था और फिर भी मेरे घर आनेवाला मेरे धंधे की कोई बात जानता ही नहीं था। उलटे मैं उनसे पूछ-पूछ करता 'आपको क्या अड़चन है?'

पैसा तो याद आये तो भी बहुत जोख़िम है, तब पैसे की भजना करना उसमें कितना बड़ा जोखिम होगा?

मनुष्य एक जगह भजना (पूजा)कर सके, या तो पैसे की भजना कर सके या तो आत्मा की। दो जगह एक मनुष्य का उपयोग रहता नहीं।

दो जगह पर उपयोग किस तरह रहेगा? एक ही जगह पर उपयोग रहेगा। इसका अब क्या करें?

एक सेठजी मिले थे। वैसे लखपति थे, मुझसे पंद्रह साल बड़े, पर मेरे साथ उठते-बैठते। उस सेठजी से मैंने एक दिन पूछा कि, 'सेठजी, ये लडके सभी कोट-पतलून पहनकर घूमते हैं और आप एक इतनी-सी धोती, वह भी दोनों घुटने खुली दिखे ऐसा क्यों पहनते हो?' वह सेठजी मंदिर दर्शन करने जाते हों तब ऐसे नंगे दिखे। इतनी-सी-धोती वह लंगोटी पहनी हो ऐसा लगे। इतनी-सी-बंडी और सफेद टोपी, और दर्शन करने दौड-धुप करते जाये। मैंने कहा कि, 'मुझे लगता है कि यह सब साथ लेकर जाओगे? तब मुझसे कहे कि,' नहीं ले जा सकते अंबालालभाई, साथ में नहीं ले जा सकते!' मैंने कहा, 'आप तो अक्लमंद, हम पाटीदारो में समझ कहाँ और आपकी तो अक्लमंद कोम, कुछ ढूँढ निकाला होगा!' तो कहने लगे कि, 'कोई नहीं ले जा सकता।' फिर उनके लड़के से पूछा कि, 'पिताजी तो ऐसा कहते थे', तब वह कहता है कि, 'वह तो अच्छा है कि साथ नहीं ले जा सकते। यदि साथ ले जा सकते तो मेरे पिताजी तीन लाख का कर्ज़ हमारे सर छोड़कर जाये ऐसे हैं! मेरे पिताजी तो बहुत पक्के हैं। इसलिए नहीं ले जा सकते, यही अच्छा है, वरना पिताजी तो तीन लाख का कर्ज़ छोडकर हमें कहीं का नहीं रखते। मेरे तो कोट-पतलून भी पहनने को नहीं रहते। यदि साथ ले जा सकते न तो हमारा तो काम तमाम कर दें, ऐसे पक्के हैं!'

प्रश्नकर्ता : मुम्बई के सेठ दो नंबरी पैसे इकट्ठे करते हैं उसकी क्या 'इफेक्ट' होगी?

दादाश्री : उससे कर्म का बंध पड़े। वह तो दो नंबरी या एक नंबरी हो, खरे-खोटे पैसे सभी कर्म के बंध डाले। कर्मबंध तो वैसे भी पड़े। जहाँ तक आत्मज्ञान नहीं होता वहाँ तक कर्मबंध पड़ता है। और कुछ पूछना है? दो नंबरी पैसों से खराब बंध पड़े। इससे जानवर गति में जाना पड़े, पशुयोनि में जाना पड़े।

प्रश्नकर्ता : ये लोग पैसों के पीछे पड़े हैं तो संतोष क्यों नहीं रखते?

दादाश्री : हमसे कोई कहे कि संतोष रखना तब हम कहें कि भाई, आप क्यों नहीं रखते, यह मुझे बताओगे? वस्तुस्थिति में संतोष रखा जा सके ऐसा नहीं है। उसमें भी किसी के कहने पर रहे ऐसा नहीं है। जितना ज्ञान होगा उस मात्रा में अपने आप स्वाभाविक रूप से संतोष रहेगा ही। संतोष यह करने जैसी चीज़ नहीं है, वह तो परिणाम है। जैसा आपने इम्तहान दी होगा वैसा परिणाम आयेगा। इस प्रकार जितना ज्ञान होगा उसके परिणाम रूप उतना संतोष रहेगा। संतोष रहे इसलिए तो ये लोग इतना सारा परिश्रम करते हैं! देखो न, संडास में भी दो कार्य करते हैं, वही बैठे दाढी भी करे! इतना सारा लोभ होता है! यह तो सब इन्डियन पझल कहलाये!

कई वकील तो संडास में बैठकर दाढी बनाते हैं और एक की पत्नी मुझे कहती थी कि हमारे साथ बात करने तक की फुरसत नहीं है। तब वे कैसे एकांतिक हो गये? एक ही तरफा, एक ही कोना और फिर वह रेसकोर्स (घोडदौड़) होती है न? यहाँ लक्ष्मी कमायें और वहाँ जाकर फेंक आये। लीजिए! यहाँ गाय को दुहकर वहाँ गधे को पिला दे।

इस कलियुग में पैसों का लोभ करके खुद का अवतार (जन्म) बिगाड़ते हैं और मनुष्यपन में रौद्रध्यान-आर्तध्यान होते रहते हैं, इससे मनुष्यपन जाता रहे। बड़े बड़े राज भोगकर आये हैं। ये कुछ भिखमंगे नहीं थे, लेकिन अभी मन भिखमंगे जैसा हो गया है। इसलिए यह चाहिए और वह चाहिए होता रहता है। वरना जिसका मन संतुष्ट हो उसे कुछ भी नहीं देने पर भी राजश्री होते हैं। पैसा ऐसी चीज़ है कि मनुष्य को लोभ के प्रति दृष्टि कराता है। लक्ष्मी तो बैर बढानेवाली चीज़ है। उससे जितना दूर रह सकें उतना उत्तम और (लक्ष्मी) खर्च होने पर अच्छे कार्य में खर्च हो जाये तो अच्छी बात है।

पैसे तो जितने आनेवाले होंगे उतने ही आयेंगे। धर्म में पड़ेंगे तब भी उतने आयेंगे और अधर्म में पड़ेंगे तब भी उतने ही आयेंगे। लेकिन

अधर्म में पड़ने पर दुरुपयोग होगा और दुःखी होंगे, और इस धर्म में सदुपयोग होगा और सुखी होंगे और मोक्ष में जा सकोगे, वह मुनाफ़े में। बाक़ी पैसे तो उतने ही आनेवाले है।

पैसों के लिए सोचना यह एक बुरी आदत है, वह कैसी बुरी आदत है? कि एक आदमी को भारी बुखार चढ़ा होने पर हम उसे भाप देकर बुखार उतारे। भाप देने पर पसीना बहुत हो जाये ऐसा फिर हररोज भाप देकर पसीना निकाल-निकाल करने पर स्थिति क्या होगी? वह समझे कि इस प्रकार एक दिन मुझे बहुत फायदा हुआ था, मेरा बदन हलका हो गया था, इसलिए अब यह रोज की आदत डालनी है। रोजाना भाप लें और फिर पसीना निकाल-निकाल करने पर क्या होगा?

लक्ष्मी तो बाय-प्रोडक्ट है। जैसे, हमारा हाथ अच्छा रहेगा कि पैर अच्छा रहेगा क्या उसका रात-दिन विचार करना पड़ता है? नहीं, क्यों? क्या हमें हाथ-पैर की जरूरत नहीं है? पर उसका विचार नहीं करना पड़ता। इस तरह लक्ष्मी का विचार करने का नहीं। जैसे कि हमें हाथ दुःख रहा हो तब उसकी मरम्मत (उसके इलाज) जितना विचार करना पड़ता है, ऐसे ही कभी विचार करना पड़े तो तत्कालीन समय तक के लिए ही, बाद में विचार नहीं करने का, दूसरी झंझट में नहीं पड़ना। लक्ष्मी का स्वतंत्र ध्यान नहीं करते। लक्ष्मी का ध्यान एक ओर है तो दूसरी ओर दूसरा ध्यान चूक जाते हैं। स्वतंत्र ध्यान में तो, लक्ष्मी ही नहीं परंतु स्त्री के भी ध्यान में भी नहीं उतर सकतें। स्त्री के ध्यान में उतरने पर स्त्री के समान हो जाये! लक्ष्मी के ध्यान में उतरने पर चंचल हो जाये। लक्ष्मी भटकती हो और ध्यान करनेवाला भी भटकता! लक्ष्मी तो सब जगह भटकती रहे निंरतर, ऐसे वह भी खुद सब जगह भटकता रहे। लक्ष्मी का ध्यान ही नहीं कर सकते। वह तो बड़े से बड़ा रौद्रध्यान है, वह आर्तध्यान नहीं, रौद्रध्यान है! क्योंकि खुद के घर खाने-पीने का है, सबकुछ है, फिर भी लक्ष्मी की ओर ज्यादा आशा रखता है, अर्थात् उतना दूसरे के यहाँ कम होवे। दूसरे के यहाँ कम हो, ऐसा प्रमाण भंग मत करो। वरना आप गुनहगार हैं! अपने आप सहज आये उसके गुनहगार आप नहीं! सहज तो

पाँच लाख आये कि पचास लाख आये। लेकिन फिर आने के बाद लक्ष्मी को रोककर नहीं रख सकते। लक्ष्मी तो क्या कहती है? हमें रोकना नहीं, जितनी आये उतनी दे दो।

धन के अंतराय कब तक? जहाँ तक कमाने की इच्छा हो तब तक। धन के प्रति दुर्लक्ष हुआ कि ढेरों आये।

क्या खाने की जरूरत नहीं है? संडास जाने की क्या जरूरत नहीं है? वैसे ही लक्ष्मी की भी जरूरत है। संडास, जैसे याद किये बिना होता है, वैसे लक्ष्मी भी याद किये बगैर आती है।

एक जमींदार मेरे पास आया वह मुझ से पूछने लगा कि 'जीवन जीने के लिए कितना चाहिए? मेरे घर हजार बीघा जमीन है, बंगला है, दो कार है और बैंक बैलेंस भी काफी है। तो मुझे कितना रखना?'

मैंने कहा, 'देख भाई, प्रत्येक की जरूरत कितनी होनी चाहिए उसका अंदाज, उसके (खुद के) जन्म के समय क्या शान-शौकत थी, इसके अंदाज से सारी जिन्दगी के लिए तू प्रमाण निश्चित कर। वही दरअसल नियम है। यह तो सब एक्सेस में (अति) जाता है और एक्सेस तो ज़हर है, मर जायेगा!'

प्रत्येक मनुष्य को अपने घर में आनंद आये। झोंपडेवाले को बंगले में आनंद नहीं आता और बंगलेवाले को झोंपडे में आनंद नहीं आता। उसका कारण है, उसकी बुद्धि का आशय। जो बुद्धि के आशय में जैसा भर लाया हो वैसा ही उसको मिले। बुद्धि के आशय में जो भरा हो उसके दो फोटोग्राफ्स निकले : (१) पापफल और (२) पुण्यफल। बुद्धि के आशय का प्रत्येक ने विभाजन किया तब १०० प्रतिशत में से अधिकांश प्रतिशत मोटर, बंगला, लडके-लडकियाँ और बहू, इन सब के लिए भरे। तब वह सब प्राप्त करने में पुण्य खर्च हो गया और धर्म के लिए मुश्किल से एक या दो प्रतिशत ही बुद्धि के आशय में भरे।

(कोई एक व्यक्ति) बुद्धि के आशय में लक्ष्मी प्राप्त करना, ऐसा

भर लाया। तब उसका पुण्य खर्च हुआ इसलिए लक्ष्मी के ढेर के ढेर लगे। दूसरा (व्यक्ति) बुद्धि के आशय में लक्ष्मी प्राप्त करना ऐसा लेकर तो आया लेकिन उसमें पुण्य काम आने के बजाय पापफल सामने आया। इसलिए लक्ष्मी मुँह ही नहीं दिखाती। यह तो इतना स्पष्ट हिसाब है कि किसी का ज़रा-सा भी चले ऐसा नहीं है। तब ये अभागे ऐसा मान लेते हैं कि मैं दस लाख रुपये कमाया। अरे, यह तो पुण्य खर्च हुआ और वह भी उलटी राह। इसके बजाय तेरा बुद्धि का आशय बदल। धर्म के लिए ही बुद्धि का आशय बाँधने योग्य है। ये जड़ वस्तुएँ मोटर, बंगला, रेडियो इन सब की भजना करके उनके लिए ही बुद्धि का आशय, बाँधने योग्य नहीं है। धर्म के लिए ही, आत्मधर्म के लिए ही बुद्धि का आशय रखें। वर्तमान में आपको जो प्राप्त है वह भले हो, पर अब तो आशय बदलकर केवल संपूर्ण शत-प्रतिशत धर्म के लिए ही रखें।

हम अपने बुद्धि के आशय में शत-प्रतिशत धर्म और जगत कल्याण की भावना लाये हैं। अन्य किसी जगह हमारा पुण्य खर्च ही नहीं हुआ। पैसे, मोटर, बंगले, लडका, लडकी, कहीं भी नहीं।

हमें जो जो मिले और ज्ञान ले गये, उन्हों ने दो-पाँच प्रतिशत धर्म के लिए-मुक्ति के लिए डाले थे, तभी हम (दादाजी) मिले। हमने शत-प्रतिशत धर्म में डाले, इसलिए सब जगह से ही हमें धर्म के लिए 'नो ऑब्जेक्शन सर्टिफिकेट' प्राप्त हुआ है।

कोई बाहर का आदमी मेरे पास व्यवहार से सलाह लेने आये कि 'मैं इतनी माथापच्ची (झंझट) करता हूँ लेकिन कुछ परिणाम नहीं निकलता।' तब मैं कहूँ, 'अभी तेरे पाप का उदय है। इसलिए किसी से उधार रुपये लायेगा तो रास्ते में तेरी जेब कट जायेगी। अभी तू घर बैठकर आराम से जो भी शास्त्र पढ़ता हो वह पढ़ और भगवान का नाम लिया कर।'

पाप का पूरण करता है (बीज बोता है), वह जब गलन होगा (फल आयेगा) तब मालूम होगा! तब तेरे छक्के छूट जायेंगे! अग्नि के ऊपर बैठे हैं ऐसा लगेगा!! पुण्य का पूरण करेगा तब मालूम होगा कि कुछ निराला ही आनंद आता है! इसलिए जिसका भी पूरण करें वह सोच-समझकर करना, कि गलन होते समय परिणाम क्या आता है। पूरण करते समय लगातार चौकन्ने रहना, पाप करते समय, किसी को छलकर पैसे जमा करते समय, लगातार ध्यान रखना कि वह भी गलन होनेवाला है। वह पैसा बैंक में रखोगे तब भी वह जानेवाला तो है ही। उसका भी गलन तो होगा ही। और वह पैसा जमा करते समय जो पाप किया, जो रौद्रध्यान किया, वह उसकी धाराओं के साथ आयेगा वह मुनाफे में और जब उसका गलन होगा तब तेरी क्या हालत होगी?

कुदरत क्या कहती है? उसने कितने रुपये खर्च किये वह हमारे यहाँ देखा नहीं जाता। यहाँ तो, वेदनीय कर्म क्या भूगता? शाता या अशाता, उतना ही हमारे यहाँ देखने में आता है। रुपये नहीं होने पर भी शाता भुगतेगा और रुपये होने पर भी अशाता भुगतेगा। अर्थात् वह जो शाता या अशाता वेदनीय कर्म भुगतता है, उसका रुपयों पर आधार नहीं रहता।

अभी आपकी थोडी आमदनी हो, बिलकुल शांति हो, कुछ झंझट नहीं हो, तब कहना कि 'चलो, भगवान के दर्शन कर आयें!' और ये सारे, जो पैसे कमाने में रहे, वे ग्यारह लाख की कमाई करे इसमें हर्ज नहीं, लेकिन अभी पचास हजार का घाटा होने पर अशाता वेदनीय खडी होगी। 'अरे, ग्यारह लाख में से पचास हजार कम कर दे न!' तब कहेगा कि 'नहीं, वह तो उसमें रकम घट जायेगी न!' तब, रकम तू किसे कहता है? कहाँ से आयी यह रकम? वह तो जिम्मेदारीवाली रकम थी, इसलिए कम होने पर चिल्लाना नहीं। रकम बढ़ने पर तू खुश होता है और कम होने पर? अरे, सच्ची पूँजी तो 'भीतर' पड़ी है, उसे क्यों हार्ट 'फेइल' करके सारी पूँजी बरबाद करने में लगा है! हार्ट 'फेइल' करे तब सारी पूँजी खतम हो जाये कि नहीं?

दस लाख रुपये बाप ने लड़के को दिये हो और बाप कहेगा कि 'अब मैं आध्यात्मिक जीवन जीऊँ!' तब वह लडका रोजाना शराब में, मांसाहार में, शेयर बाजार में, आदि में वह पैसा गँवा दें। क्योंकि जो पैसे गलत रास्तों से जमा हुए हैं, वे खुद के पास रहेंगे नहीं। आज तो खरा

धन भी, खरी मेहनत की कमाई भी रहती नहीं, तब खोटा धन कैसे रहेगा? अर्थात् पुण्यै का धन चाहिए, जिसमें अप्रामाणिकता नहीं हो, नियत साफ़ हो, ऐसा धन होगा तो वही सुख देगा। वरना अभी दुषमकाल का धन, वह भी पुण्य का ही कहलाता है, मगर पापानुबंधी पुण्य का, जो निरे पाप ही बंधाये!

एक मिनट भी जहाँ न रह पाये, ऐसा यह संसार। जबरदस्त पुण्य होने के बावजूद भीतर अंतरदाह शान्त नहीं होता, अंतरदाह निरंतर जलता ही रहता है! चहुँ ओर से सभी फर्स्ट क्लास संयोग होने पर भी अंतरदाह चलता हो, वह अब कैसे मिटे? पुण्य भी आखिर खतम हो जाये। दुनिया का कानून है कि पुण्य के खतम होने पर पाप का उदय होगा। यह तो अंतरदाह है। पाप के उदय समय जब बाहर का दाह पैदा होगा उस समय तेरी क्या दशा होगी? इसलिए सँभलो, ऐसा भगवान कहते हैं।

यह तो पूरण-गलन स्वभाव का है। जितना पूरण हुआ उतना फिर गलन होनेवाला है। और गलन नहीं होता न तब भी मुसीबत हो जाती। पर गलन होता है (उस समय) उतना फिर खाया जाता है। यह साँस ली वह पूरण किया और उच्छवास निकाला वह गलन है। सब पूरण-गलन स्वभाव का है, इसलिए हमने खोजबीन की है कि 'तंगी नहीं और भराव भी नहीं! हमारे सदैव लक्ष्मी की तंगी भी नहीं और भराव भी नहीं!' तंगीवाला, सूख जाये और भराववाले को सूजन हो जाये। भराव माने क्या? कि लक्ष्मीजी दो-तीन साल तक खिसके ही नहीं। लक्ष्मीजी तो चलती भली, वरना दु:खदायी हो जाये।

मेरे कभी भी तंगी नहीं आई और न ही भराव हुआ। लाख आने से पहले तो कहीं न कहीं से बम आये और उसमें खर्च हो जाये इसलिए भराव तो होता ही नहीं कभी, और तंगी भी नहीं आयी।

प्रश्नकर्ता : लक्ष्मी क्यों कम हो जाती है?

दादाश्री : चोरियों से। जहाँ मन-वचन-काया से चोरी नहीं होती वहाँ लक्ष्मीजी कृपा करें। लक्ष्मी का अंतराय चोरी से है। ट्रिक (चालाकी)

और लक्ष्मी को बैर है। स्थूल चोरी बंद होने पर तो ऊँची ज्ञाति में जन्म होगा, पर सूक्ष्म चोरी अर्थात् ट्रिक करें वह तो हार्ड (भारी) रौद्रध्यान है और उसका फल नर्कगति है। यह कपड़ा खींचकर देते हैं वह हार्ड रौद्रध्यान है। ट्रिकें तो होनी ही नहीं चाहिए। ट्रिकें करना किसे कहलाये?

'बहुत चोखा माल है' कहकर मिलावटवाला माल देकर खुश हो। और अगर हम कहें कि, क्या कोई ऐसा करता है भला? तब वह कहेगा कि, 'वह तो ऐसा ही करना पड़े।' लेकिन प्रामाणिकता की इच्छावाले को क्या कहना चाहिए कि 'मेरी इच्छा तो अच्छा माल देने की है, लेकिन माल ऐसा है वह ले जाओ।' इतना कहने पर जिम्मेवारी हमारी नहीं।

अर्थात् ये सभी कहाँ तक प्रामाणिक हैं? कि जहाँ तक कालेबाज़ार का अधिकार उन्हें प्राप्त नहीं हुआ।

प्रश्नकर्ता : लक्ष्मी कितनी मात्रा में कमानी चाहिए?

दादाश्री : ऐसा कुछ नहीं। सबेरे रोजाना नहाना पड़ता है न? तब क्या कोई सोचता है कि एक लोटा (पानी) ही मिलेगा तो क्या करूँगा? इस तरह लक्ष्मी का विचार नहीं आना चाहिए। डेढ़ बालटी मिलेगा उतना निश्चित ही है और दो लोटे यह भी निश्चित ही है। उसमें कोई कम-ज्यादा नहीं कर सकता इसलिए मन-वचन-काया से लक्ष्मी के लिए तू प्रयत्न करना, इच्छा मत करना, यह लक्ष्मीजी तो बैंक-बैलेन्स है, इसलिए बैंक में जमा होगी तो मिलेगी न? कोई लक्ष्मी की इच्छा करे तब लक्ष्मीजी कहे कि 'तेरे इस जुलाई में पैसे आनेवाले थे, पर अब वे अगले जुलाई में मिलेंगे।' और यदि कहे कि, 'मुझे पैसे नहीं चाहिए' तब वह भी बड़ा गुनाह है। लक्ष्मीजी का तिरस्कार भी नहीं और इच्छा भी नहीं करनी चाहिए। उन्हें तो नमस्कार करने चाहिए। उनकी तो विनय करनी चाहिए, क्योंकि वह तो हेड आफ़िस में है। लक्ष्मीजी तो उसका (व्यक्ति का) टाइम, काल पकने पर आनेवाली ही है। यह तो इच्छा से अंतराय पड़ता है। लक्ष्मीजी कहती हैं कि, 'जिस टाइम पर जिस मोहल्ले में रहना हो उस टाइम पर ही रहना चाहिए, और हम टाइम-टाइम पर भेज ही देते

हैं। तेरे हरेक ड्राफ्ट आदि सभी ही टाइम पर आ जायेंगे, पर मेरी इच्छा मत करना। क्योंकि कानूनन हो, उसे ब्याज समेत भेज देतें हैं। जो इच्छा नहीं करता उसे समय पर भेजतें हैं।' दूसरा, लक्ष्मीजी क्या कहती है? तुझे मोक्ष में जाना हो तो हक़ की लक्ष्मी मिले वही लेना, किसी का भी ऐंठकर, छल कर, मत लेना।

लक्ष्मीजी जब हमें (दादाजी को) मिलती हैं, तब हम उन्हें कह देते हैं कि बडौदा में 'मामा की पोल' (मुहल्ला) और छटवाँ घर, जब अनुकूलता हो तब पधारना और जब जाना हो चली जाना। आपका ही घर है, पधारना। इतना हम कहें। हम विनय नहीं चूकते।

दूसरी बात, लक्ष्मीजी को दुत्कारना नहीं चाहिए। कई ऐसा कहते हैं कि, 'हमको नहीं चाहिए, लक्ष्मीजी को तो हम टच (छूना) भी नहीं करते', वे लक्ष्मीजी को नहीं छुए उसमें हर्ज नहीं। पर ऐसा जो वाणी से बोलते हैं न, ऐसा जो भाव करते हैं वह जोखिम है। अगले कई जन्मों तक लक्ष्मीजी के बगैर भटकना पड़े। लक्ष्मीजी तो 'वीतराग' है, 'अचेतन वस्तु है'। खुद उसे दुत्कारना नहीं चाहिए। किसी को भी दुत्कार कर, चाहे वह चेतन हो कि अचेतन हो, फिर उसका संयोग प्राप्त नहीं होगा। हम 'अपरिग्रही' हैं ऐसा बोले मगर 'लक्ष्मीजी को कभी भी नहीं छुऊँगा' ऐसा नहीं बोलते। लक्ष्मीजी तो सारी दुनिया के व्यवहार की 'नाक' कहलाये। 'व्यवस्थित' के नियम के आधार पर सभी देव-देवियाँ प्रस्थापित हैं, इसलिए कभी भी दुत्कार नहीं सकते।

लक्ष्मी का त्याग नहीं करना है, पर अज्ञानता का त्याग करना है। कुछ लोग लक्ष्मी का तिरस्कार करते हैं। यदि किसी भी वस्तु का तिरस्कार करें तो वह कभी भी फिर मिलेगी ही नहीं, केवल निःस्पृह होना वह तो बहुत बड़ा पागलपन है।

संसारी भावों में हम निःस्पृही हैं और आत्मा के भावों में सस्पृही हैं। सस्पृही-निःस्पृही होगा तभी मोक्ष में जा पायेगा। इसलिए हर प्रसंग का स्वागत करना।

काला धन कैसा कहलाये यह समझाता हूँ। बाढ़ का पानी हमारे घर में घुस जाये तो क्या हमें खुशी होगी कि घर बैठे पानी आया? फिर जब वह बाढ़ उतरेगी और पानी चला जाये, तब जो कीचड़ रह जायेगा उसे धोकर निकालते निकालते तो दम निकल जायेगा। यह काला धन बाढ़ के पानी के समान है। वह रोम-रोम काटकर जायेगा। इसलिए मुझे सेठों को कहना पड़ा कि संभलकर चलना।

जहाँ तक उलटा धंधा शुरू नहीं होता वहाँ तक लक्ष्मीजी जायेंगी नहीं। उलटा धंधा लक्ष्मी के जाने का निमित्त है!

यह काल कैसा है? अभी इस काल के लोगों को तो कहाँ से माल मिल जाये, दूसरों से कैसे झपट लूँ, किस तरह मिलावटवाला माल दूसरों को देना, बिना हक़ के विषय भोगना, उसमें से फुरसत मिले तो अन्य वस्तु की खोज करेंगे न? इससे सुख में कोई वृद्धि नहीं हुई है। सुख तो कब कहलाये? 'मेन प्रोडक्शन' करें तब। यह संसार तो 'बाय प्रोडक्ट' है, पूर्व में कुछ किया होगा उससे देह मिली, भौतिक चीजें मिली, स्त्री मिलें, बंगले मिले। यदि मेहनत से मिलता हो तो मजदूर को भी मिले, पर ऐसा नहीं है। आज के लोगों की समझ में फर्क हुआ है। इसलिए यह बाय-प्रोडक्शन के कारखाने निकाले हैं। लेकिन बाय-प्रोडक्शन के नहीं निकालने चाहिए। मेन प्रोडक्शन, माने मोक्ष का साधन, 'ज्ञानी पुरुष' से प्राप्त कर लें, फिर संसार का बाय-प्रोडक्शन तो अपने आप मुफ्त में ही मिलेगा! बाय-प्रोडक्ट के लिए तो अनंत अवतार बिगाड़े, दुर्ध्यान करके! एक बार मोक्ष प्राप्त कर लो तो सारा फसाद समाप्त हो जाये!

इस भौतिक सुख के बजाय अलौकिक सुख होना चाहिए कि जिस सुख से हमें तृप्ति हो। यह लौकिक सुख तो उलटे बेचैनी बढा़ये! जिस दिन पचास हजार की बिक्री हो उस दिन गिन-गिनकर ही सारा दिमाग खतम हो जाये। दिमाग तो इतना व्याकुल हो गया हो कि खाना-पीना भी अच्छा नहीं लगे। क्योंकि मेरे भी बिक्री आती थी, वह मैंने देखी थी, तब यह दिमाग कैसा हो जाता था! यह कुछ भी मेरे अनुभव से बाहर नहीं है न? मैं तो यह समंदर तैर कर बाहर निकला हूँ, इसलिए मुझे सब मालूम

है कि आपको क्या होता होगा? अधिक रुपये आने पर अधिक व्याकुलता होगी। दिमाग डल (मंद) हो जाये और कुछ भी याद नहीं रहे। बेचैनी, बेचैनी और बेचैनी ही रहा करे। नोट ही गिनता रहे, पर वे नोट यहाँ कि यहाँ रह गई और गिननेवाले चल बसे! पैसा तो कहता है कि, 'तू समझ सके तो समझ लेना, हम रहेंगे और तू जायेगा!' इसलिए हमें उसके साथ कोई बैर नहीं करना। पैसे से कहें हम कि, 'आइये जी,' क्योंकि उसकी ज़रूरत है! सभी की जरूरत है न? पर अगर उसके पीछे तन्मयाकार रहे, तो गिननेवाले गये और पैसे रहे। फिर भी गिनने तो होंगे, उससे कोई छुटकारा ही नहीं है न! कोई सेठ ही ऐसा होगा जो मुनीम से कहे कि, 'भाई, मुझे खाते समय अडचन मत करना, पैसे आये तो आराम से गिनकर तिजोरी में रखना और निकालना।' ऐसे दखल नहीं करे ऐसा कोई एकाध सेठ होगा! हिन्दुस्तान में ऐसे दो-चार सेठ, निर्लेप रहनेवाले होंगे! मुझ जैसे! मैं कभी पैसे नहीं गिनता!! यह क्या बखेडा! आज बीस-बीस सालों से मैंने लक्ष्मीजी को हाथ से स्पर्श नहीं किया है तभी इतना आनंद रहता है न!

व्यवहार है वहाँ तक लक्ष्मीजी की ज़रूरत रहेगी ही। पर उसमें तन्मयाकार मत होना, तन्मयाकार नारायण में होना। अकेले लक्ष्मीजी के पीछे पड़ेंगे तो नारायण गुस्सा करेंगे। लक्ष्मी-नारायण का तो मंदिर है न! लक्ष्मीजी कोई ऐसी-वैसी चीज़ नहीं है।

रुपये कमाते समय जो आनंद होता है वैसा ही आनंद खर्च करते समय होना चाहिए। लेकिन तब तो बोल उठे, 'इतने सारे खर्च हो गये!!'

पैसे खर्च हो जायेंगे ऐसी जागृति नहीं रखनी चाहिए। इसलिए खर्च करने को कहा है कि जिससे लोभ छूटे और बार-बार दे सकें (अच्छे कार्य में)।

भगवान ने कहा कि हिसाब लगाना नहीं। भविष्यकाल का ज्ञान हो तो हिसाब लगाना। अरे, हिसाब लगाना हो तो कल मर जाऊँगा, ऐसा हिसाब लगा न?!

रुपयों का नियम ऐसा है कि कुछ दिन टिके और फिर चले जायें, वे अवश्य ही जायें। वह रुपया फिरे जरूर, फिर वह मुनाफा लेकर आये, घाटा लेकर आये कि ब्याज लेकर आये, पर फिरेगा जरूर। वह बैठा नहीं रहता, वह स्वभाव से चंचल है। इसलिए जब कोई ऊपर चढ़ा हो (धनवान हुआ) तब फिर उसे फँसाव लगे। तब वह आसानी से इस फसाव में से बाहर नहीं निकल पाता। (उसकी हालत उस बिल्ली की तरह होती है, जो ज़ोर लगाकर मटकी में मुँह तो डाल देती है लेकिन फिर निकाल नहीं पाती।)

अनाज तीन-पाँच साल में निर्जीव हो जाये, फिर नहीं उगता।

पहले लक्ष्मी पाँच पुश्त टिकती थी, तीन पुश्त तो टिकती ही। यह तो अब एक पुश्त भी नहीं टिकती। यह लक्ष्मी ऐसी है कि एक पुश्त भी नहीं टिकती। उसकी हयात में ही आये और हयात में ही जाती रहे, ऐसी यह लक्ष्मी है। यह तो पापानुबंधी पुण्य की लक्ष्मी है। उसमें थोड़ी बहुत पुण्यानुबंधी पुण्य की लक्ष्मी हो वह आपको यहाँ (दादाजी के पास) आने की प्रेरणा करे, यहाँ मिलाप कराये और आपको यहाँ खर्च करवाये। अच्छे मार्ग में लक्ष्मी खर्च होगी।

वरना यह तो मटियामेट हो जायेगा (धूल में मील जायेगा)। सब गटर में चला जायेगा। यह हमारी संतानें ही लक्ष्मी भोगते हैं न, जब हम उनसे कहें कि तुमने मेरी लक्ष्मी खर्च की। तब वे कहेंगे, 'आपकी कहाँ? हम हमारी ही भुगतते (भोगते) हैं।' ऐसा कहेंगे। अर्थात् गटर में ही गया न सब!

इस दुनिया को यथार्थ यानी जैसी है वैसी, समझें तो जीवन जीने जैसा है, यथार्थ समझें तो संसारी उपाधि-चिंता नहीं होगी, इसलिए जीने जैसा लगे फिर!

[२] लक्ष्मी के संग संकलित व्यवहार

क्या किया हो तो अमीरी आयेगी? लोगों की अनेकों प्रकार से हैल्प

(मदद) की होगी तब लक्ष्मी हमारे यहाँ आयेगी! वरना लक्ष्मी नहीं आती। लक्ष्मी तो देने की इच्छावाले के यहाँ ही आती है। जो नुकसान उठाता है, (जान-बूझकर) ठगाता है, नोबिलिटी रखे, वहाँ लक्ष्मी होगी। कभी चली गई है ऐसा लगे, मगर फिर वहीं आकर खडी रहेगी।

पैसे कमाने के लिए पुण्य की आवश्यकता है। बुद्धि से तो उलटे, पाप बँधते हैं। बुद्धि से पैसे कमाने जाये तो पाप बँधेगा। मेरे पास बुद्धि नहीं है इसलिए पाप नहीं बंधता। हमारे में (दादाजी के पास) एक परसेन्ट बुद्धि नहीं है।

मेरा स्वभाव दयालु, भाव प्रधान! उगाही करने गया होऊँ तो भी देकर आऊँ! वैसे उगाही करने तो जाता ही नहीं कभी। उगाही करने गया होऊँ कभी और उसे कोई तंगी हो तो उलटे देकर आऊँ! मेरी जेब में कल को खर्च करने के जो हो, वह भी देकर आऊँ। फिर दूसरे दिन खर्च की समस्या हो! ऐसे मेरा जीवन व्यतीत हुआ है।

प्रश्नकर्ता : अधिक पैसा होने पर मोह होगा न! अधिक पैसे हो तो शराब के समान ही है न?

दादाश्री : हर एक का नशा है। यदि नशा नहीं होता हो, तो पैसे अधिक हो तो हर्ज़ नहीं। पर नशा हुआ इसलिए शराबी हुआ, फिर उसी खुमारी में भटका करे लोग! लोगों को तिरस्कार करे, यह गरीब है, ऐसा है। आया बड़ा धन्नासेठ, लोगों को गरीब कहनेवाला! खुद धन्नासेठ! गरीबी कब आयेगी मनुष्य को यह कह नहीं सकते। आप कहते हैं ऐसा ही, सारा (खूब) नशा चढ़ जाये।

सारी जिन्दगी संसार के लोग पैसों के पीछे लगे रहते हैं। और पैसों से तृप्त हुआ हो ऐसा मनुष्य मैंने कहीं नहीं देखा। तो गया कहाँ यह सब?

अर्थात् यह सब ऐसे गप ही चलता है। धर्म के नाम पर एक अक्षर भी समझते नहीं और सब चलता है। इसलिए मुसीबत आने पर क्या करना इसकी समझ नहीं है। डॉलर (पैसा)आने लगे तब उछलकुद करने लगे। पर फिर मुसीबत आने पर निपटारा कैसे करना यह नहीं आता इसलिए

निरे पाप ही बाँधें। उस समय पाप नहीं बँधे और वक्त गुज़र जाये, उसी का नाम धर्म, ऐसा समझना।

अर्थात् हमेशा ही सूर्योदय और सूर्यास्त होगा, ऐसा संसार का नियम है। इससे कर्म के उदय से पैसे बढ़ते ही जायें, अपने आप। हर ओर से, गाडियाँ-बाडियाँ, मकान बढ़ते रहें। सब बढ़ता रहें। पर जब चेन्ज (परिवर्तन) आये, फिर बिखरता रहे। पहले जमा होता रहे फिर बिखरता रहे। बिखरते समय शांति रखना, यही सब से बड़ा पुरूषार्थ!

सगा भाई पचास हजार डॉलर नहीं लौटाये, फिर वहाँ जीवन कैसे जीयें, यह पुरुषार्थ है। सगा भाई पचास हजार डॉलर नहीं लौटाता और ऊपर से गालियाँ देता हो, वहाँ जीवन कैसे जीना, यह पुरूषार्थ है।

और कोई नौकर आफिस में से दस हजार का माल चुरा गया, वहाँ कैसे बरतना यह पुरूषार्थ है। वरना ऐसे समय में नासमझी से सारा अवतार बिगाड़ दे।

प्रश्नकर्ता : आप्तवाणी में कहा गया है कि, तू यदि किसी को हजार-दो हजार देता है वह क्यों देता है, यानी तू अपने अहंकार और मान के खातिर देता है।

दादाश्री : मान बेचा उसने। 'अहंकार' बेचा तो हमें ले लेना चाहिए। खरीद लेना चाहिए। मैं तो सारी जिंदगी खरीदता आया हूँ। यानी 'अहंकार' खरीदना।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् क्या दादा?

दादाश्री : आपके पास पाँच हजार लेने आया, उसकी आँख में क्या शरमिंदगी नहीं होगी?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : वह माँगे तब शरम छोडकर, 'अहंकार' बेचता है हमें। तो हमारे पास पूँजी हो तो हम खरीद लें।

पैसे माँगने जाना किसे भाये? सगे चाचा के पास लेने जाना भाये? क्यों नहीं भाये? अरे, संबंधी के पास से लेने में भी किसी को अच्छा नहीं लगता। बाप के पास से भी लेना अच्छा नहीं लगे। हाथ पसारना अच्छा नहीं लगता।

प्रश्नकर्ता : उसका अहंकार खरीद लिया। मगर हमें उसका अहंकार क्या काम आयेगा?

दादाश्री : अहह! उसका अहंकार खरीद लिया माने उसमें जो शक्तियाँ है वे हमारे में प्रकट हुई। वह अहंकार बेचने आया बेचारा!

प्रश्नकर्ता : हाथ-पैर सलामत हो फिर भी भीख माँगे तो उसे दान देने से इन्कार करना गुनाह है?

दादाश्री : दान नहीं करते उसमें हर्ज नहीं। पर उसे ऐसा कहें कि यह हट्टा-कट्टा भैंसे जैसा होकर ऐसा क्यों करता है? ऐसा हम नहीं कह सकते। आप कहें कि भाई, मैं दे सकूँ ऐसा नहीं है।

सामनेवाले को दुःख हो ऐसा हमें नहीं बोलना चाहिए। वाणी ऐसी अच्छी रखें कि सामनेवाले को सुख हो। वाणी तो बड़े से बड़ा धन है आपके पास। वह दूसरा धन तो टिके या नहीं भी टिके, पर वाणी तो सदा के लिए टिके। आप अच्छे शब्द निकालें तो सामनेवाले को आनंद होगा। आप उसे पैसे नहीं दें मगर अच्छे शब्द बोलिये न!

यहाँ आप बड़ा बंगला बनायेंगे तो जगत के भिखारी होंगे। छोटा घर तो जगत के आप राजा! क्योंकि यह पुद्‌गल है, पुद्‌गल बढ़ने पर तो आत्मा (प्रतिष्ठित आत्मा) वज़न गँवा दे। और पुद्‌गल कम हुआ तो आत्मा (प्रतिष्ठित आत्मा) भारी हो जाये। अर्थात् संसार के दुःख, आत्मा का विटामीन है। यह जो दुःख हैं वे आत्मा का विटामीन है और सुख जो हैं वह देह का विटामीन है।

रुपयों का स्वभाव हमेशा से कैसा है? चंचल, इसलिए दुरुपयोग नहीं हो उस तरह आप उसका सदुपयोग करें। उसे स्थिर मत रखना। संपति के प्रकार कितने हैं? तब कहें, स्थावर (अचल) और जंगम (चल)। जंगम माने ये डॉलर आदि सब, और स्थावर माने यह मकान आदि सब! उन में यह स्थावर अधिक टिकेगी। और जंगम माने नकद डालर आदि जो हो वे तो चले ही समझें! अर्थात् नकद का स्वभाव कैसा? दस साल से ज्यादा यानी ग्यारहवे साल नहीं टिकते। फिर सोने का स्वभाव चालिस-पचास साल टिकने का, और स्थावर मिल्कियत का स्वभाव सौ साल टिकने का। अर्थात् मुदतें सभी अलग-अलग होगी मगर आखिर में तो सभी जानेवाला ही है। इसलिए हमें यह सब समझकर चलना चाहिए। ये वणिक पहले क्या करते थे, नक़द पच्चीस प्रतिशत ब्याज पर रखते थे। पच्चीस प्रतिशत सोने में और पच्चीस प्रतिशत मकान में लगाते, इस प्रकार पूँजी की व्यवस्था करते थे। बड़े पक्के लोग! अभी तो लड़के को ऐसा कुछ सिखाया भी नहीं जाता! क्योंकि अब पूँजी ही नहीं रही उतनी, तो क्या सिखाते?

यह पैसे का काम कैसा है कि हमेशा ग्यारहवें साल उसका नाश होता है। दस साल तक चले। यह बात सच्चे पैसे की है, आया समझ में? खोटे पैसों की तो बात ही अलग है। सच्चे पैसे ग्यारहवे साल खतम हो जायें।

प्रश्नकर्ता : शेयर बाजार में सट्टेबाजी करना या सोना खरीदना, क्या अच्छा?

दादाश्री : शेयर बाज़ार तो जाना ही नहीं चाहिए। शेयर बाज़ार में तो खिलाडी का काम है। उसमें बीच के लोग भून जाते हैं! खिलाड़ी लोगों को रास आये वहाँ। इसमें बड़े खिलाडियों को लाभ होता है और छोटे लोग जो है वे बेचारे मुश्किल से अपना खर्च निकालते हैं।

प्रश्नकर्ता : दादाजी हमारे अमरिका के महात्मा पूछतें हैं कि हमने जो कुछ थोड़ा-बहुत कमाया है उसे लेकर इन्डिया चले जायें? बच्चों का विशेष खयाल आता है कि अमरिका में अच्छे संस्कार नहीं मिलते।

दादाश्री : हाँ, यह सब तो ठीक है। यहाँ यदि पैसे कमा लिए हो

तो अपने घर इन्डिया चले जाना। बच्चों को अच्छी तरह पढ़ाना।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा कि कमा लिया हो तो चले जाना, पर पैसों की कोई लिमिट नहीं होती, इसलिए आप कोई लिमिट बताइये। आप कोई ऐसी लिमिट बताइये कि उतना लेकर हम इन्डिया चले जायें।

दादाश्री : हाँ, हमें हिन्दुस्तान में कोई रोजगार करना हो तो उसके लिए जो रकम चाहिए वह ब्याज पर नहीं उठानी पड़े ऐसा करना। थौड़ा-बहुत बैंक से लेना पड़े तो ठीक है। बाकी कोई उधार नहीं देगा, वहाँ तो कोई उधार नहीं देगा। यहाँ (अमरिका में) भी कोई उधार नहीं देता। बैंक ही उधार देगा। इसलिए उतना साथ लाना। बिजनेस तो करना ही होगा न। वहाँ पर खर्च निकालना होगा न? पर वहाँ बच्चे बहुत अच्छे होंगे। यहाँ डॉलर मिले पर बच्चों के संस्कार की परेशानी है न!

अमरिका में हमें स्टोर में ले जायें। कहे, चलिये दादाजी। तब स्टोर बेचारा हमें नमस्कार करता रहे कि धन्य है, जरा भी नज़र नहीं बिगाड़ी हम पर! सारे स्टोर में दृष्टि बिगाड़ी ही नहीं कहीं पर। हमारी दृष्टि बिगड़े ही नहीं न उस पर। हम नज़र जरूर डालेंगे पर दृष्टि नहीं बिगड़ती। हमें क्या जरूरत किसी चीज़ की! मुझे कोई चीज़ काम नहीं आती। तुम्हारी दृष्टि बिगड़ जाये न?

प्रश्नकर्ता : जरूरत हो वह चीज़ खरीदनी पड़ेगी।

दादाश्री : हमारी दृष्टि बिगड़ती नहीं! स्टोर हमें हाथ जोड़कर नमस्कार किया करे कि ऐसे पुरुष देखे नहीं कभी! और तिरस्कार भी नहीं। फर्स्ट क्लास, राग भी नहीं, द्वेष भी नहीं। वीतराग! आये वीतराग भगवान!

एक महात्मा ने पूछा कि शेयर बाजार का काम मैं जारी रखुँ कि बंद कर दूँ? मैंने कहा, बंद कर देना। आज तक जो किया उतना धन वापस खींच लीजिए। अब बंद कर देना चाहिए। वरना अमरिका आये वह, नहीं आये के बराबर हो जायेगा। जैसे थे वैसे! कोरी पाटी लेकर घर जाना पड़ेगा।

ब्याज का व्यापार करनेवाला मनुष्य, मनुष्य में से मिटकर क्या हो जाये यह भगवान ही जाने! आप बैंक में रुपया रखे उसमें हर्ज नहीं। अन्य किसी को उधार दें उसमें हर्ज नहीं। पर ब्याजखोरी में पड़ा मनुष्य, दो प्रतिशत, डेढ़ प्रतिशत, सवा प्रतिशत, ढाई प्रतिशत आदि में जो पड़ा है, उसका क्या होगा यह नहीं कहा जाये।

ब्याज लेने में हर्ज नहीं है। पर यह तो ब्याज लेने का व्यापार लगाया, धंधा, ब्याज-दलाली का। आपको क्या करना चाहिए? जिसे उधार दिया हो उसे कहना कि बैंक का ब्याज जो है वह आपको मुझे देना होगा। पर फिर एक मनुष्य के पास ब्याज भी नहीं है, मूल धन भी नहीं है तो वहाँ पर मौन रहना। उसे दुःख हो ऐसा वर्तन (बर्ताब) नहीं करना। अर्थात् हमारे पैसे डूब गये हो ऐसा मानकर चला लेना। दरिया में गिर गये हो तब क्या करते?

प्रश्नकर्ता : यदि सरकार एबव नोर्मल टैक्स डाले तब नोर्मालिटी लाने हेतु, लोग टैक्स की चोरियाँ करें, तो उसमें क्या गलत है?

दादाश्री : लोभी मनुष्य का लोभ कम करने हेतु टैक्स बहुत उमदा चीज़ है।

लोभी मनुष्य मरते दम तक, पाँच करोड पास में हो तो भी वह संतुष्ट नहीं होगा। तब फिर ऐसा दंड मिले न बार-बार तो वह पीछे हटेगा, इसलिए यह तो अच्छी चीज़ है। इन्कमटैक्स तो किसे कहेंगे? पंद्रह हजार से अधिक के ऊपर लगता हो तो। पंद्रह हजार तक तो वे छोड देते हैं बैचारे, तब फिर छोटे परिवारवालों को खाने-पीने में हरकत (दिक्कत) नहीं आती न!

प्रश्नकर्ता : भगवान की भक्ति करनेवाले गरीब क्यों होते हैं और दुःखी क्यों होते हैं?

दादाश्री : भक्ति करनेवाले? ऐसा है न, भक्ति करनेवाले दुःखी होते हैं ऐसा कुछ है नहीं, पर कुछ लोग आपको दुःखी नज़र आते हैं।

बाकी भक्ति करने की वज़ह से ही इन लोगों के पास बंगले हैं। अर्थात् भगवान की भक्ति करते-करते मनुष्य दु:खी हो ऐसा होगा नहीं, पर यह दु:ख तो उसका पिछला हिसाब है। और अभी भक्ति कर रहा है यह नया हिसाब है। उसका तो जब फल आयेगा तब। आपकी समझ में आया? जो पीछे जमा किया था उसका फल आज आया है। अब आज जो यह करता है, जो अच्छा करता है, उसका फल अभी आनेवाला है (आना बाकी है)। समझ में आया? यह बात आपकी समझ में आती है? समझ नहीं आती हो तो निकाल दें इस बात को।

प्रश्नकर्ता : मानसिक शांति प्राप्त करने के लिए मनुष्य, किसी गरीब-अशक्त की सेवा करें या फिर भगवान की भजना करें? या किसी को दान करें? क्या करें?

दादाश्री : मानसिक शांति चाहिए तो अपनी चीज़ दूसरों को खिला देना। कल आइसक्रीम का डिब्बा भरकर लाना और इन सभी को खिलाना। उस समय कितना आनंद होता है यह तू मुझे बताना। इन कबूतरों को तू दाना डालेगा उससे पहले तो वे उछलकूद करने लगेंगे। और तूने डाला, तेरी अपनी वस्तु तूने दूसरों को दी कि भीतर आनंद शुरू हो जाये। अभी रास्ते में कोई मनुष्य गिर गया, उसकी टाँग टूट गई और लहू बहता हो वहाँ तू अपनी धोती फाड़कर पट्टी बाँधेगा तो उस वक्त तुझे आनंद होगा।

ये लड़कियाँ, लड़के किस तरह ब्याहते होंगे? ऐसा है न, लड़कियों के लिए पैसों का ज्यादा खर्च होता है। लड़कियाँ अपना लेकर आई है। उसे बैंक में जमा कराये। लड़कियों के पैसे बैंक में जमा हो और बाप खुश हो कि देखिये मैंने सत्तर हजार खर्च करके ब्याही, उस जमाने में। उस जमाने की बात करता हूँ। अरे, तूने क्या किया? उसके पैसे बैंक में थे। तू तो वही का वही है, पावर ऑफ एटर्नी है। तुझे उसमें क्या? पर वह रौब जमाता है। और कोई लड़की (अपने भाग्य में) तीन हजार लेकर आई हो, तो उस समय उसके बाप का धंधा-पानी सब ठंडा पड़ गया हो। तब तीन हजार में ही ब्याहेगी, क्योंकि वह जितना लाई है उतना खर्च होगा।

ये लड़के-लड़कियों के, सभी के अपने पैसे है जिसे हम जोडकर रखते है और उसका कारोबार ही हमारे हाथों में रहता है, बस उतना ही है।

हमारे लोग कहें कि हमें दूधों धोकर देने हैं। अरे, दूधों धोकर देनेवाले, यह गलत अहंकार है। मुझे पैसे लौटाने है ऐसा भाव रखना, तो लौटा सकेगा! लेते समय, लौटाने है ऐसा जो तय करता है, उसका व्यवहार मैंने बहुत सुंदर देखा है। कुछ तो तय होना चाहिए न! बाद में विपरीत संजोग आ मिले वह अलग बात है, पर डिसीझन (निश्चय) तो होना चाहिए न? यही तो सारा 'पझल' (समस्या) है।

हम पूछे कि 'क्यों साहब, परेशानी में क्यों हो?' तब कहे, 'क्या करें? ये तीन दुकानें, यहाँ संभालना, वहाँ संभालना!' और अर्थी उठें तब चार नारियल ही साथ ले जाना। दुकाने तीन हो, दो हो या एक हो मगर फिर भी नारियल तो चार ही और वे भी बिना पानी के। और ऊपर से कहे की तीन दुकानें संभालनी है मुझे। कहेगा, 'एक फोर्ट में हैं, यहाँ एक कपड़े की है, एक भूलेश्वर में है।' खाते समय भी दुकान, दुकान, दुकान! रात सपने में भी कपड़े के सारे थान नापता रहे!! अर्थात् मरते समय लेखा-जोखा आयेगा, इसलिए संभल कर चलना।

धंधे के विचार कहाँ तक करने चाहिए? जहाँ तक बोझा न लगे वहाँ तक करना। बोझा लगे तब बंद कर देना। वरना मारे गये समझना। चार पैर और उपहार में पूँछ मिलेगी। फिर रँभाएगा! चार पैर और पूँछ, समझें आप?

[३] धंधा, सम्यक् समझ से

हिन्दुस्तान में मनुष्य जन्म हुआ, वह मोक्ष के लिए ही है। उसी के लिए ही हमारा जीवन है। यदि ऐसा हेतु रखा हो फिर उसमें जीतनी प्राप्ति हो उतनी सही, पर हेतु तो होना ही चाहिए न? यह खाना-पीना सब उसी के लिए है, समझें आप? जीवन किस के लिए जीना है, सिर्फ कमाने के लिए? प्रत्येक जीव सुख खोजता है। सर्व दु:खों से मुक्ति कैसे

हो यह जानने के लिए ही जीवन जीना है। इसमें मोक्षमार्ग प्राप्त कर लेना है। मोक्षमार्ग के लिए ही यह सबकुछ है।

दो अर्थ (हेतु) के लिए लोग जीते हैं। आत्मार्थ जीनेवाला तो कोई विरल ही होगा। अन्य सभी लक्ष्मी-अर्थ जी रहे हैं। सारा दिन लक्ष्मी, लक्ष्मी और लक्ष्मी! लक्ष्मी के पीछे तो सारा संसार पागल हुआ है पर उसमें सुख है ही नहीं न! घर बंगले यों ही खाली पड़ें हों और दोपहर वे (मालिक) कारखाने में होते हैं। तब बंगले का आनंद कहाँ ले पाये! इसलिए आत्मज्ञान जानिये। ऐसे अंधे होकर कब तक भटकते रहना?

यदि कोई पूछें कि मैं किस धर्म का पालन करूँ? तब हम कहें कि भैया, इन तीन वस्तुओं का पालन कर : (१) पहले नीतिमत्ता! तेरे पास पैसे कम-ज्यादा हो उसमें हर्ज नहीं, मगर 'नीतिमत्ता पालना' इतना अवश्य करना, भैया।

(२) दूसरे 'ऑब्लाइजिंग नेचर' रखना! किसी की मदद करने के लिए तेरे पैसे न हो उसमें हर्ज नहीं, पर बाज़ार जाते वक्त कहना, 'आपको बाज़ार का कोई काम हो तो कहिए, मैं बाज़ार जा रहा हूँ।' इस तरह किसी की मदद करना। यह है ऑब्लाइजिंग नेचर।

(३) तीसरे, किसी भी मदद के बदले में कुछ पाने की अपेक्षा मत रखना। सारा संसार बदले की अपेक्षा रखता है। ऐसा एक्शन-रिएक्शन वाला संसार है। इच्छाएँ आपकी भीख है, जो व्यर्थ जाती है।

प्रश्नकर्ता : आत्मा की प्रगति के लिए क्या करते रहना चाहिए?

दादाश्री : उसे प्रामाणिकता की निष्ठा पर चलना चाहिए। वह निष्ठा ऐसी कि बहुत तंगी में आ जाये तब आत्मशकित का आविर्भाव हो (प्रकट होना)। यदि तंगी नहीं हो और बहुत पैसे आदि हो तब वहाँ आत्मा प्रकट नहीं हो। प्रामाणिकता, एक ही रास्ता है। केवल भक्ति से कुछ हो सके ऐसा है नहीं, प्रामाणिकता नहीं हो और भक्ति करे उसका अर्थ नहीं है। प्रामाणिकता साथ में होनी ही चाहिए। प्रामाणिकता

से मनुष्य फिर से मनुष्य जन्म पा सकता है। और जो लोग मिलावट करते हैं, जो बिना हक़ का ले लेते हैं, बिना हक़ का भोगतें हैं, वे सभी यहाँ से जानवर योनि में जाते हैं। उसमें कोई कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि स्वभाव ही बना है उसका बिना हक़ का भोगने का, इसलिए वहाँ जानवर में जाये और आराम से भोग सकें। वहाँ तो कोई किसी की औरत नहीं न! सभी औरतें खुद की ही! यहाँ मनुष्य में तो विवाहित लोग, इसलिए किसी की औरत पर दृष्टि बिगड़नी नहीं चाहिए मगर जिसे आदत-सी-हो गई हो, उसका फिर वहाँ जानवर में जाने पर ही समाधान होगा। एक अवतार, दो अवतार वहाँ भोगकर आये तब सीधा हो। उसे सीधा करते हैं ये सभी अवतार। सीधा होकर वापस यहाँ आये, फिर टेढ़ा हो तब फिर वहाँ भेजकर सीधा करे। इस प्रकार सीधा होते होते फिर मोक्ष के लायक हो जाये। टेढ़ाइयाँ होगी वहाँ तक मोक्ष नहीं होता।

नीतिमय पैसे लाये उसमें हर्ज नहीं। पर अनीति के पैसे लाये तो समझो अपने ही पैरों पर कुल्हाडी मारी और अर्थी उठेगी तब पैसे यहाँ पड़े रहेंगे। सब कुदरत की जप्ती में जायें और खुद ने यहाँ पर जो गुत्थियाँ उलझायी हो उसे फिर भुगतना पड़ेगा।

भगवान को नहीं भजे और नीति से चले तो बहुत हो गया। भगवान को भजता हो पर नीति से नहीं चलता हो तो उसका अर्थ नहीं। वह मीनिंगलेस है। फिर भी हमें ऐसा नहीं कहना चाहिए। वरना, वह फिर भगवान को छोड़ देगा और अनीति बढ़ाते रहेगा। अर्थात् नीति रखना। उसका फल अच्छा आये।

संसार में सुख एक ही जगह है। जहाँ संपूर्ण नीति हो। प्रत्येक व्यवहार में संपूर्ण नीति होगी वहाँ पर सुख है। और दूसरे, जो समाज सेवक होगा और वह खुद के लिए नहीं पर दूसरों के लिए जीवन व्यतीत करता हो तो उसे बहुत ही सुख होगा, पर वह सुख भौतिक सुख है, वह मूर्च्छा का सुख कहलाये।

ये वाक्य आपकी दुकान पर लिखकर लगवाना :

(१) प्राप्त को भुगतें-अप्राप्त की चिंता मत करें।

(२) भुगते उसकी भूल।

(३) डिस्ऑनेस्टी इज द बेस्ट फूलिशनेस।

सभी चीज़ें दुनिया में है। पर 'सकल पदार्थ है जगमांहि, भाग्यहीन नर पावत नहीं'। ऐसा कहते हैं न? अर्थात् जितनी कल्पना में आये उतनी चीज़ें संसार में होती है पर आपके अंतराय नहीं होने चाहिए, तभी वे मिलती हैं।

सत्यनिष्ठा चाहिए। ईश्वर कुछ मदद करने के लिए फालतु बैठे नहीं है। आपकी नीयत सच्ची होगी तभी आपका काम होगा।

लोग कहते हैं कि, 'सच्चे की ईश्वर मदद करता है!' पर नहीं, ऐसा नहीं है। ईश्वर सच्चे की मदद करता हो तो खोटे ने क्या गुनाह किया है? क्या ईश्वर पक्षपाती है? ईश्वर को तो सब जगह निष्पक्षपाती रहना चाहिए न? ईश्वर किसी की ऐसी मदद नहीं करता। वह इसमें हाथ ही नहीं डालता। ईश्वर का नाम याद करते ही आनंद होता है, उसकी वज़ह क्या है कि वह मूल वस्तु है, और खुद का ही स्वरूप है। इसलिए याद करते ही आनंद हो। बाकी ईश्वर कुछ करनेवाले नहीं है। वे कुछ दे ही नहीं सकते। उनके पास कुछ है ही नहीं, तो क्या देंगे?

प्रश्नकर्ता : दादाजी, व्यवहार किस तरह करना?

दादाश्री : विषमता पैदा होनी नहीं चाहिए। समभाव से समाधान (निपटारा) करना चाहिए। हमें जहाँ से काम निकालना हो, वह मैनेजर कहे, 'दस हजार दीजिए तो ही आपका पाँच लाख का चेक निकालूँगा।' अब हमारे शुद्ध व्यापार में कितना मुनाफा होगा? पाँच लाख रुपयों में, दो लाख हमारे घर के हो और तीन लाख औरों के हो, तब वे लोग धक्के खाये वह क्या अच्छा कहलाये? इसलिए हम उस मैनेजर को समझायें कि, 'भाईजी, मुझे इसमें कोई मुनाफा नहीं होता'। अटा-पटाकर पाँच में निपटारा

करें और नहीं माने तो आखिर दस हजार रुपये देकर भी हमारा चेक ले लेना। अब वहाँ, 'मैं ऐसे रिश्वत कैसे दे सकता हूँ?' ऐसा करेंगे तो इन लोगों को जवाब कौन देगा? वह माँगनेवाला बड़ी-बड़ी गालियाँ देंगे! जरा समझ जाइये, समयानुसार समझ जाइये।

रिश्वत देना गुनाह नहीं है। जिस समय जो व्यवहार आया उसे एडजस्ट करना तुझे नहीं आया वह गुनाह है। अब ऐसे में कहाँ तक दूम पकडकर रखना? हम से एडजस्ट हो सके, हमारे पास बैंक बैलेंस हो और लोग हमें भला-बुरा नहीं कहे, वहाँ तक पकड़े रहना, पर बैंक बैलेंस से ऊपर जाता हो और लोग भला-बुरा कहने लगे तो क्या करना? आपको क्या लगता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, बराबर है।

दादाश्री : मैं तो हमारे व्यापार में कह देता था कि, 'भाई, दे आइये रुपये, हम भले ही चोरी नहीं करते, मनमानी नहीं करते, मगर रुपये दे आइये।' वरना लोगों को धक्के खिलाना वह हम जैसे भले लोगों का काम नहीं। अर्थात् रिश्वत देना, उसे मैं गुनाह नहीं समझता। गुनाह तो, उसने हमें माल दिया है और हम उसे समय पर पैसे नहीं देते, उसे गुनाह कहता हूँ।

रास्ते में अगर कोई लुटेरा आपसे पैसे माँगे तब आप दे देंगे कि नहीं? या फिर सत्य के खातिर नहीं देंगे?

प्रश्नकर्ता : दे देने पड़े।

दादाश्री : क्यों दे देते हो वहाँ? और यहाँ क्यो नहीं देते? ये दूसरे प्रकार के लुटेरे हैं। आपको नहीं लगता कि ये दूसरे प्रकार के लुटेरे हैं?

तब ये दूसरे प्रकार के लुटेरे! ये सुधरे हुए और वे बगैर सुधरे लुटेरे! ये सिविलाइजड् लुटेरे! वे अनसिविलाइजड् लुटेरे!!!

प्रश्नकर्ता : आपश्री भगवान प्राप्ति के मार्ग पर मुड़ गये, साथ ही

आप बड़े धंधे के साथ जुड़े हुए हैं। तो दोनों कैसे संभव है? यह समझाइये।

दादाश्री : अच्छा प्रश्न है कि 'हँसना और आटा फाँकना,' ये दोनों कैसे हो सके? एक ओर तो धंधा करते हो और इस ओर भगवान की राह पर हो, यह दोनों कैसे संभव है? पर हो सकें, ऐसा है। बाहर का अलग चले और अंदर का अलग चले, ऐसा है। दोनों अलग-अलग ही है। यह 'चन्दुभाई' है न, वह चन्दुभाई जुदा है और आत्मा अलग है, अंदर दोनों अलग हो सके ऐसा है। दोनों के गुणधर्म भी अलग हैं। जैसे यहाँ पर सोना और ताँबा दोनों मिल गयें हो और उन्हें फिर से अलग करना चाहें तो होंगे कि नहीं होंगे?

प्रश्नकर्ता : होंगे।

दादाश्री : उसी तरह ज्ञानी पुरुष इसे अलग कर सकें। ज्ञानी पुरुष चाहे सो कर सके, आपको यदि अलग करवाना हो तो आना यहाँ, लाभ लेना चाहते हो तो आना।

धंधा चलता रहे मगर धंधे में एक क्षण के लिए भी हमारा उपयोग नहीं होता। केवल नाम होगा उस ओर। पर हमारा उपयोग क्षणभर के लिए भी नहीं होता। महीने में एकाध दिन दो घंटे के लिए मुझे जाना पड़े और तब जाऊँ भी, पर हमारा उपयोग नहीं होता। उपयोग नहीं होना माने क्या, यह समझे आप? ये लोग दान लेने जाते हैं न? अब किसी से दान लेने गयें हो, और हम कहें कि इस स्कूल के लिए दान कीजिए, तो वह देने के लिए इच्छा नहीं रखता हो तो उसका मन अलग रखे हमारे से। रखे कि नहीं रखे?

प्रश्नकर्ता : रखे।

दादाश्री : उसी तरह इसमें (भीतर) सब अलग रहता है। उसमें अलग रखने के रास्ते होते हैं सब। आत्मा भी अलग है और यह 'चन्दुभाई' भी अलग है।

सारी जिंदगी मैंने धंधे में चित्त रखा ही नहीं है। धंधा किया ज़रुर है। मेहनत की होगी, काम किया होगा, पर चित्त नहीं रखा।

प्रश्नकर्ता : धंधे की चिंता होती है, बहुत बाधाएँ आती है।

दादाश्री : चिंता होने लगे तो समझना कि काम और बिगड़नेवाला है। चिंता नहीं हो तो समझें कि कार्य नहीं बिगड़ेगा। चिंता कार्य की अवरोधक है। चिंता से तो धंधे की मौत आती है। जिस में चढ़ा-उतरी हो उसी का नाम धंधा। पूरण-गलन है वह। पूरण हुआ उसका गलन हुए बगैर रहता ही नहीं। पूरण-गलन में हमारी कोई मिल्कियत नहीं है और जो हमारी मिल्कियत है उसमें कोई पूरण-गलन नहीं होता! ऐसा शुद्ध व्यवहार है! यह आपके घर में आपके बीवी-बच्चे सभी पार्टनर्स है न?

प्रश्नकर्ता : सुख-दुःख भुगतने में जरूर।

दादाश्री : आप अपने बीवी-बच्चों के अभिभावक (संरक्षक) कहलायें। अकेला अभिभावक ही क्यों चिंता करें? और घरवाले तो उलटा कहें कि आप हमारी चिंता मत करना।

प्रश्नकर्ता : चिंता का स्वरूप क्या है? जन्में तब तो थी नहीं फिर ये आई कहाँ से?

दादाश्री : ज्यों-ज्यों बुद्धि बढ़ेगी त्यों-त्यों कुढन बढेगी। जब जन्में तब बुद्धि थी? धंधे के लिए विचार की आवश्यकता है पर उस से आगे गये तो बिगड़ जायेगा। धंधे के लिए दस-पंद्रह मिनिट सोचना चाहिए, फिर उससे आगे बढ़े और विचारों के बट (भँवर) चढ़ने लगे तो वह नोर्मालिटी से बाहर गया कहलाये, तब उसे छोड देना। धंधे के विचार तो आयेंगे ही पर उस विचार में तन्मयकार होकर विचार चलते रहें तो उसका ध्यान उत्पन्न होगा और इसलिए चिंता होगी। और यह चिंता भारी नुकसान करे।

प्रश्नकर्ता : मन में तय करें कि आर्तध्यान, रौद्रध्यान नहीं करना है पर दुकान घाटे में चले इसलिए करना पड़े तो क्या करे?

दादाश्री : अरे दुकान घाटे में चलती है, तू घाटे में चलता है क्या? घाटे में तो दुकान चलती है। दुकान का स्वभाव ही ऐसा है कि घाटे में भी चले और फिर मुनाफा भी करवाये। अर्थात् वह घाटा और मुनाफा, दोनो दिखाती रहेगी।

हम (दादाजी) धंधा करने से पहले क्या करें? स्टीमर समुद्र में तैरायें तब महाराज के पास सारी पूजा करवायें, सत्यनारायण की कथा अन्य विधियाँ सब करवायें। कभी कभी स्टीमर का पूजन भी करें, फिर उस स्टीमर के कानों में हम कह दें कि, 'तुझे डुबना हो तब डुब जाना, हमारी इच्छा नहीं है! ऐसी हमारी इच्छा नहीं है!!' ऐसे 'ना' कह दें इसलिए फिर निःस्पृह हो गये कहलाये, फिर वह तो डुब जाये। हमारी इच्छा नहीं है, ऐसा कहा यानि वह शक्ति काम करती है। और यदि वास्तव में डुब गई तो हम समझेंगे कि उसे कान में कहा ही था। हमने नहीं कहा था क्या? अर्थात् एडजस्टमेन्ट स्थापित करें तब पार उतरें ऐसा है इस संसार में।

मन का स्वभाव ऐसा है कि उसकी धारणा के अनुसार नहीं होने पर निराश हो जायेगा। ऐसा न हो इसलिए इस तरह से रास्ते निकालने होंगे। फिर छः महीने के बाद डुबे या फिर दो साल के बाद, मगर तब हम 'एडजस्टमेन्ट' ले लें कि छः महीने तो चला। व्यापार माने इस पार या उस पार। आशा के महल निराशा लाये बगैर नहीं रहते। संसार में वीतराग रहना बड़ा मुश्किल है। वह तो हमारी (दादाजी की) ज्ञानकला और बुद्धिकला, दोनों जबरदस्त होने से हम वीतराग रह पायें।

पहले एक बार, ज्ञान होने से पहले हमारी कंपनी को घाटा हुआ था। तब हमें सारी रात नींद नहीं आती थी और चिंता रहती थी। तब भीतर से जवाब आया कि इस घाटे की चिंता कौन कौन करता होगा? मुझे लगा कि मेरे हिस्सेदार तो शायद चिंता नहीं भी करते हों। मैं अकेला ही करता होऊँ। और बीवी-बच्चे सभी हिस्सेदार हैं तब वे तो कुछ जानते नहीं। अब वे लोग धंधे के बारे में कुछ नहीं जानते तब भी उनका संसार चलता है, तो मैं अकेला ही कमअक्ल हूँ, जो सारी चिंता लिए बैठा हूँ! फिर मुझे अक्ल आ गई।

औरों की तरह आप एक ही पक्ष में पड़े हैं, मुनाफे के पक्ष में। आप लोगों से विरुद्ध चलें। लोग मुनाफा चाहें तो हम कहे 'घाटा हो' और घाटा खोजनेवाले को कभी चिंता नहीं होगी। मुनाफा खोजनेवाला हमेशा चिंता में रहेगा और घाटा तलाशनेवाले को कभी चिंता ही नहीं होगी, उसकी हम गारन्टी देते हैं। हमारी बात समझें?

धंधा शुरू करते ही हमारे लोग क्या कहे? इस काम में चौबीस हजार तो अवश्य मिलेंगे!! अब जब फोर्कास्ट (आगाही) करता है, तब बदलते संयोग लक्ष में लिए बगैर यों ही फोर्कास्ट करता है।

हमने भी सारी जिन्दगी कान्ट्रैक्ट में गुज़ारी है, सभी तरह के कान्ट्रैक्ट किये हैं। और समुद्र में जेटियाँ भी बनाई हैं। धंधे की शुरूआत में मैं क्या करता था? जहाँ पाँच लाख का मुनाफा होनेवाला हो वहाँ धारण करूँ कि एकाध लाख मिले तो काफी है। अगर बिना नफा-नुकसान, इन्कमटैक्स निकले और हमारा भोजन खर्च निकले तो बहुत हो गया। फिर मिलें तीन लाख। तब मन का आनंद देखिये, क्योंकि धारणा से कहीं अधिक प्राप्त हुए। और यह तो चालीस हजार की धारणा की हो और बीस मिले तो दुःखी हो जाये।

धंधे के दो लड़के, एक का नाम घाटा और दूसरे का नाम मुनाफा। घाटे नामक बेटा कोई पसंद नहीं करता, पर दोनों होंगे ही।

हम मेहनत करते समय चहुँ ओर का ध्यान रखते है, फिर भी कुछ नहीं मिले तो समझ लेना कि हमारे संयोग सीधे नहीं है। अब वहाँ बहुत जोर लगाएँ तो उलटे घाटा होगा, उसके बजाय हमें आत्मा संबंधी कुछ कर लेना चाहिए। पिछले अवतार में ऐसा नहीं किया, इसलिए तो यह झंझट हुई। हमारा ज्ञान दिया हो उसकी तो बात ही निराली है, पर हमारा ज्ञान नहीं मिला हो तब भी कई भगवान के भरोसे छोड देते हैं न! उन्हें क्या करना पड़ता है? 'भगवान जो करे वह सही' कहते हैं न? और बुद्धि से नापने जायें तो कभी तौल मिले ऐसा नहीं है।

जब संयोग अच्छे नहीं हो तब लोग कमाने निकलते है। तब तो

भक्ति करनी चाहिए। संयोग अच्छे नहीं हो तब क्या करना चाहिए? आत्मा संबंधी सत्संग, आदि करते रहे। सब्जी नहीं हो तो ना सही, खीचडी जितना तो होगा न। अपना योग हो तो कमायें, वरना मुनाफा नज़र आता हो तो भी घाटा करें और यदि योग हो तो घाटा नज़र आता हो तो भी मुनाफा कमायें। सब योग की बात है।

घाटा या मुनाफा, कुछ भी अपने बस की बात नहीं। इसलिए नेचरल एडजस्टमेन्ट के आधार पर चलिये। दस लाख कमाने के पश्चात् एकदम से पाँच लाख का घाटा हो तब? यह तो लाख का घाटा ही नहीं सह सकें न! फिर सारा दिन रोना-धोना और चिंता करते रहें! अरे, पागल भी हो जायें! इस तरह पागल हुए मैंने कई देखे हैं।

प्रश्नकर्ता : दुकान पर ग्राहक आये इसलिए मैं दुकान जलदी खोलता हूँ और रात देरी से बंद करता हूँ, क्या यह बराबर है?

दादाश्री : आप ग्राहक को आकर्षित करनेवाले कौन? अन्य लोग जब खोलते हों तब आप दुकान खोलना। लोग सात बजे खोलते हों और हम साढ़े नौ बजे खोलें तो वह गलत कहलाये। लोग जब बंद करें तब हम भी बंद करके घर जायें। व्यवहार क्या कहता है कि लोग क्या करते हैं यह देखिये। लोग सो जायें तो आप भी सो जाइये। रात दो बजे तक अंदर ऊधम मचाते रहें वह किस काम का? भोजन लेने के पश्चात् क्या ऐसा विचार करते हो कि यह कैसे पचेगा? उसका परिणाम तो सुबह निकल ही आये न! धंधे में भी सब ऐसा ही है।

खाते-पीते समय चित्त कारखाने पर नहीं जाता हो तो कारखाना बराबर है, पर खाते-पीते समय चित्त कारखाने पर रहता हो तो भाड़ में जाये वह कारखाना, क्या करना है उसे? हमारे हार्टफेइल का इंतज़ाम करवाये वह कारखाना, यह हमारा काम नहीं है। अर्थात् नोर्मालिटी समझनी होगी। फिर ऊपर से, तीन शिफ्ट चलाये। क्या यह ठीक है? नई बहू ब्याहकर लाया है, इसलिए बहू के मन का समाधान रखना चाहिए न? घर जाने पर बहू फरियाद करे कि, 'आप तो मुझ से मिलते भी नहीं है, बातचीत भी नहीं करते!' यह उचित नहीं कहलाये न! संसार में उचित लगे ऐसा होना चाहिए।

घर में फादर के साथ और औरों के धंधे के बारे में मतभेद नहीं हो, इसलिए आप हाँ में हाँ मिलाना, कहना कि 'जो चलता है उसे चलने दीजिए।' पर घर के सभी सदस्यों को साथ बैठकर, ऐसा कुछ तय करना चाहिए कि इतनी रकम जमा करने के पश्चात् हमें ज्यादा नहीं चाहिए। ऐसा तय करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ऐसे कोई 'एग्री' (संमत) नहीं हो, दादाजी।

दादाश्री : फिर वह काम का नहीं। सब को तय करना चाहिए। अगर दो सौ साल के आयुष्य का ऍक्स्टेन्शन मिलता हो तब हम चार शिफ्ट चलायें!

प्रश्नकर्ता : अब धंधा कितना बढ़ाना चाहिए?

दादाश्री : धंधा उतना बढ़ायें कि चैन से नींद आये, जब हम हटाना चाहें तब हटा सकें, ऐसा होना चाहिए। धंधा बढ़ा-बढ़ा कर मुसीबतों को निमंत्रित नहीं करना।

यह ग्राहक और व्यापारी के बीच संबंध तो होगा ही न? अगर व्यापारी दुकान बंद कर दें तो क्या वह संबंध छूट जायेगा? नहीं छूटेगा। ग्राहक तो याद करेगा कि, 'इस व्यापारी ने मेरे साथ ऐसा किया था, ऐसा खराब माल दिया था।' लोग तो बैर याद रखे, तब फिर चाहे इस अवतार में आपने दुकान बंद कर दी हो पर अगले अवतार में वह आपको छोड़ेगा नहीं। बैर लिए बिना चैन नहीं लेगा। इसलिए भगवान ने कहा था कि 'किसी भी राह बैर छोड़िये।' हमारे एक पहचानवाले हम से रुपये उधार ले गया थे, फिर लौटाने ही नहीं आये। तब हम समझ गये कि इसका कारण, (पिछला) बैर है। इसलिए भले ले गया, ऊपर से उसे कहा कि, 'तू अब हमें रुपये नहीं लौटाना, तुझे माफ है।' यूँ अपना हक़ छोड़कर भी यदि बैर छूटता हो तो छूड़ाइये। किसी भी राह बैर छूड़ाइये, वरना किसी एक के साथ भी बँधा बैर, हमें भटकायेगा।

लाख-लाख रुपये जायें तो हम (दादाजी) जाने देंगे, क्योंकि रुपये जानेवाले हैं और हम रहनेवाले हैं। कुछ भी हो पर हम कषाय नहीं होने देंगे। लाख रुपये गये तो उसमें क्या हुआ? हम खुद तो सलामत हैं!

इन सभी बातों को अलग-अलग रखना। धंधे में घाटा हो तो कहें कि धंधे को घाटा हुआ, क्योंकि हम (खुद) घाटे-मुनाफे के मालिक नहीं हैं, इसलिए घाटा हम अपने सिर क्यों लें? हमें घाटा-मुनाफा स्पर्श नहीं करता। और यदि घाटा हुआ और इन्कमटैक्सवाला आये, तो धंधे से कहें कि, 'हे धंधे, तुझे चुकता करना है, तेरे पास चुकाने को हो तो इसको चुकता कर दे।'

हम से (दादाजी से) कोई ऐसा पूछें कि, 'इस साल घाटे में रहे हो?' तो हम बताएँ कि, 'नहीं भैया, हम घाटे में नहीं हैं, धंधे को घाटा हुआ है।' और मुनाफा होने पर कहेंगे कि, 'धंधे को मुनाफा हुआ है।' हमें घाटा-मुनाफा होता ही नहीं है।

कोई सेठ मुझ से आग्रह करें कि, 'नहीं, आपको तो प्लेन में कलकत्ता आना ही होगा।' मैं 'नहीं, नहीं' करता रहूँ फिर भी आग्रह नहीं छोडें। तब फिर मुझे प्लेन में कलकत्ता जाना पड़े। इसलिए उस घट-बढ़ (प्लेन के किराये) का हिसाब ही नहीं रखना। जब किसी दिन हमारे से डेढ़ सौ का घाटा हुआ हो उस दिन पाँच सौ अनामत के खाते में जमा ले लें ताकि साढ़े तीन सौ सिलक में हमारे पास रहेंगे। अर्थात् डेढ़ सौ के घाटे की जगह हमें साढ़े तीन सौ का सिलक नजर आये। घाटा लगे, तो उस दिन हम रुपये 'जमा राशि' के नाम पर जमा कर लें। इसलिए हमारे पास सिलक, अनामत सिलक रहे। क्योंकि यह खाता-बही कुछ कायम के लिए है? दो-चार या आठ साल के बाद फाड़ नहीं देते? यदि सच्चा होता तो कोई फाड़ता? यह तो सभी मन मनाने के साधन हैं। इसलिए ऐसा है, यह संसार सारा गप्प गुणा गप्प एक सौ चौवालीस है, बारह गुणा बारह एक सौ चौवालीस नहीं है यह। बारह गुणा बारह एक सौ चौवालीस होता तो वह एक्झेक्ट सिद्धांत कहलाता। संसार माने गप्प गुणा गप्प एक सौ चौवालीस और मोक्ष माने बारह गुणा बारह एक सौ चौवालीस।

समभाव किसे कहते हैं? समभाव, मुनाफा और घाटा दोनों को समान कहता है। समभाव माने, मुनाफे की जगह घाटा हो तो भी हरकत नही, मुनाफा हो तो भी हर्ज नहीं। मुनाफा होने पर उत्तेजना नहीं होगी और घाटे में डीप्रेशन (उदासी) नहीं आता। अर्थात् कुछ असर नहीं होता। द्वंद्वातीत हुए होते हैं।

मैं तो, धंधे में घाटा हुआ हो तो भी लोगों को बता देता और यदि मुनाफा हुआ हो तब भी लोगों से कह देता! पर लोगों के पूछने पर ही, वरना अपने धंधे की बात ही नहीं करता! लोग पूछें कि 'आपको अभी घाटा हुआ है क्या यह बात सही है?' तब बता दूँ कि, 'वह बात सही है।' इस पर कभी हमारे हिस्सेदार ने आपत्ति नहीं की कि 'आप क्यों कह देते हैं?' क्योंकि ऐसा कहना तो अच्छा, ताकि लोग कर्ज़ पर (पैसे) देते हों तो बंद हो जाये और अपना कर्ज़ बढ़ने से कम हो जायेगा। लोग तो क्या कहेंगे? 'ऐसा नहीं कहना चाहिए, वरना लोग उधार नहीं देंगे।' अरे, कर्ज़ तो हमारा बढ़ेगा न, इसलिए घाटा हुआ हो तो भी स्पष्ट कह दो न, कि भाई घाटा हुआ है।

घाटा होने पर सामनेवाले को खुलकर कह देना ताकि खुद हलका हो जाये। वरना अकेला मन में उलझे रहने से बोझ ज्यादा लगे।

जितनी भी परेशानी आये उन्हें ज्ञान से निगल जाना। ज्ञान से पहले जब हम व्यापार करतें थे तब बहुत परेशानियाँ आई थीं। उसमें से पार उतरे तभी ऐसा ज्ञान हुआ। हमारे बेटे-बेटी के गुज़र जाने पर भी हमने पेड़े खिलाये थे।

धंधे में बहुत मुश्किल आ जाये, तब तो हम इसके बारे में किसी से बात ही नहीं करते थे। हीराबा को जब बाहर से पता चले कि धंधे में मुश्किल है और वे हमसे पूछें कि, 'क्या घाटा हुआ है?' तब हम कहतें कि 'नहीं नहीं। ये लीजिए रुपये, पैसे आये हैं, आपको चाहिए?' तब हीराबा कहतीं कि, 'यह लोग तो कह रहे हैं कि घाटा हुआ है।' तब मैं कहूँ कि, 'ऐसा नहीं है, हम तो ज्यादा कमाये हैं। पर यह बात ख़ानगी रखना।'

हमारे धंधे में घाटा आने पर कुछ लोगों को दुःख होता, वे मुझसे पूछते कि, 'कितना घाटा हुआ है? बड़ा घाटा हुआ है?' तब मैं कहता कि, 'घाटा हुआ था, पर अभी अचानक ही एक लाख रुपये का मुनाफा हुआ है!' इससे उसे ठंडक हो जाती।

यह तो सब मैंने अनुभव से निष्कर्ष निकाला था, बाकी मैं धंधे पर भी पैसे के बारे में सोचता नहीं था। पैसों के लिए सोचनेवाले जैसा फुलिश (मूर्ख) और कोई है ही नहीं! यह (पैसे कमाना) तो माथे पर लिखा है, जाने दीजिए न! घाटा भी माथे पर लिखा है। बिना सोचे भी घाटा होता है या नहीं होता?

धंधे में कोई चालबाज़ लोग मिल जाये और हमारे पैसे निगलने लगे, तब अंदरूनी तौर पर समझें कि हमारे पैसे हराम के हैं इसलिए ऐसे मिले हैं। वरना चालबाज मिलते ही क्यों कर? मेरे साथ भी ऐसा होता था। एक बार खोटे पैसे आये थे, तब सभी चालबाज़ ही मिल गये थे, फिर मैंने तय किया कि ऐसा धन नहीं चाहिए।

धंधा तो वह बेहतर कि जिसमें हिंसा नहीं समाई हो, किसी को दुःख नहीं होता हो। यह तो अनाजवाले का धंधा करे और तौल में से थोड़ा निकाल ले। आजकल तो मिलावट करना सिखें हैं। उसमें भी खाने की चीज़ों में मिलावट करनेवाला जानवर में जायें। चार पैर होने पर फिर गिरेगा नहीं न? व्यापार में धर्म रखना वरना अधर्म घुस जायेगा।

धंधे में, मन बिगाड़ने पर भी मुनाफा ६६,६१६ होगा और मन नहीं बिगाड़ने पर भी ६६,६१६ रहेगा, तब कौन सा धंधा करना?

धंधे में प्रयत्न करते रहना, आगे 'व्यवस्थित' अपने आप बंदोबस्त करेगा। आप सिर्फ प्रयत्न किया करना, उसमें प्रमाद नहीं करना। भगवान ने कहा है कि सब 'व्यवस्थित' है। मुनाफा हजार या लाख होनेवाला हो तो चालाकी करने से एक पैसा भी ज्यादा नहीं होगा और यह चालाकी अगले अवतार के लिए नये हिसाब जोड़ेगी सो अलग से!

प्रश्नकर्ता : हमारे साथ कोई चालाकी कर रहा हो तो हमें भी चालाकी करनी चाहिए न ? आज-कल लोग ऐसा ही करते हैं।

दादाश्री : इसी प्रकार चालाकी का रोग लग जाता है। और यदि 'व्यवस्थित' का ज्ञान हाजिर रहा तो उसे धीरज रहेगा। यदि कोई हमसे चालाकी करने आये तो हम पिछले दरवाजे से (कोई उपाय करके) बाहर निकल जाये, हमें सामने चालाकी नहीं करनी है।

अर्थात् हम यह कहना चाहते हैं कि जैसे नहाने के पानी के लिए, रात सोने के लिए बिछौना या अन्य कुछ चीज़ों के लिए आप जरा भी विचार नहीं करते, फिर भी आपको वह मिलता है या नहीं? उसी प्रकार लक्ष्मी के लिए भी साहजिक रहना चाहिए।

पैसे कमाने की भावना करने की जरूरत नहीं है, प्रयत्न भले ही चालू रहे। ऐसी भावना से क्या होता है कि, अगर पैसे मैं खींच लूँ तो सामनेवाले के हिस्से में रहते नहीं। इसलिए कुदरती क्वॉटा (हिस्सा) जो निर्माण हुआ है, उसे ही हम रहने दें, उसमें फिर भावना करने की क्या जरूरत है? लोगों से पाप होतें रुक जायें इसलिए मैं यह समझाना चाहता हूँ।

यदि समझें तो, यह एक वाक्य में बड़ा सार समाया है। मुझसे ज्ञान प्राप्त करने की ज़रूरत है ऐसा नहीं है, ज्ञान नहीं लिया हो पर इतना उसकी समझ में आ जाना चाहिए कि यह सब हिसाब (अपने भाग्य) के अनुसार ही है, हिसाब के बाहर कुछ नहीं होता। वरना जब मेहनत करने पर भी घाटा आये तब क्या हम नहीं समझ जायेंगे! क्योंकि मेहनत माने मेहनत, मिलना ही चाहिए। पर ऐसा नहीं है, घाटा भी होता है न!

पैसे कमाने का भाव करते हैं उसका विरोध है। अन्य क्रियाओं के लिए मेरा विरोध नहीं। झूठ की परख नहीं होगी, वहाँ तक झूठ अंदर घुस जायेगा।

प्रश्नकर्ता : धंधे में यही सच्चाई है, ऐसा समझने पर भी सच्चाई हम बता नहीं सकते।

दादाश्री : अर्थात् व्यवहार हमारे अधीन नहीं है। निश्चय हमारे अधीन है। बीज बोना हमारे अधीन है, फल प्राप्त करना हमारे अधीन नहीं है। इसलिए हम भाव करें। खराब हो जाने पर भी हम अच्छा भाव करें कि ऐसा नहीं होना चाहिए।

सेठ तो कौन कहलाये? (अपने आश्रित से) एक अक्षर भी ऊँचा बोले तो वह सेठ ही नहीं कहलाये! और वे डाँटने लगे तो समझना कि यह खुद ही असिस्टन्ट है!! सेठ के मुँह पर तो कभी कड़वाहट नज़र ही नहीं आती। सेठ माने सेठ ही नज़र आये। वे अगर झिड़कियाँ देने लगे, तब सब के आगे उनकी क़ीमत क्या रह जायेगी? फिर तो नौकर भी पिछे से कहेंगे कि ये सेठ तो हरदम दुत्कारते रहते हैं! झिड़कियाँ देते रहते हैं!! जाने दीजिए, ऐसे सेठ बनने से तो गुलाम बनना बहेतर। यदि आवश्यकता हो तो निपटाने हेतु अपनी ओर से बीच में एजन्सी रखें। पर डाँटने के ऐसे काम खुद सेठ को नहीं करने चाहिए! नौकर भी खुद लड़े, किसान भी खुद लड़े और अगर आप भी खुद लड़े तो फिर व्यापारी जैसा रहा ही कहाँ? सेठ ऐसा नहीं करते। कभी जरूरत पड़ने पर बीच में एजन्सी तैयार करें अथवा लड़नेवाला ऐसा आदमी बीच में रखें जो उनकी ओर से लड़े। फिर सेठ उस झमेले का समाधान करवा दें।

१९३० में महामंदी थी। उस मंदी में सेठों ने इन बेचारे मझदूरों का बहुत खून चूसा था। इसलिए अब इस तेज़ी में मझदूर सेठों का खून चूसते हैं। ऐसा इस दुनिया का, शोषण करने का रिवाज़ है। मंदी में सेठ चूसे और तेज़ी में मझदूर चूसे। दोनों की परस्पर बारी आती है। इसलिए ये सेठ जब शोर मचाये तब मैं कहता हूँ कि आपने १९३० में मझदूरों को छोडा नहीं था, इसलिए अब ये मझदूर आपको छोडेंगे नहीं। मझदूरों का खून चूसने की पद्धति ही छोड़ दें, तो आपको कोई परेशान नहीं करेगा। अरे, भयानक कलियुग में भी कोई आपको परेशान करनेवाला नहीं मिलेगा!!!

घर में भी तेज़ी-मंदी आती है। मंदी में पत्नी पर रौब जमाते फिरे

हो, तब फिर तेज़ी आने पर पत्नी भी हमारे पर रौब जमायेगी। इसलिए तेज़ी-मंदी में समानरूप से रहें। समानतापूर्वक रहने से आपका सब अच्छी तरह चलेगा।

यह संसार क्षणभर के लिए भी बिना न्याय के नहीं रहता, अन्याय सह ही नहीं सकता। प्रत्येक क्षण न्याय ही हो रहा है। जो अन्याय किया है वह भी न्याय ही हो रहा है!

प्रश्नकर्ता : धंधे में भारी घाटा हुआ है तो क्या करुँ? धंधा बंद कर दूँ कि दूसरा धंधा करुँ? कर्ज़ बहुत चढ़ गया है।

दादाश्री : रुई बाजार का घाटा कुछ बनिये की दुकान निकालने से पूरा नहीं होता। धंधे में हुआ घाटा धंधे से ही पूरा होगा, नौकरी से भरपाई नहीं होगा। 'कान्ट्रैक्ट' का घाटा कहीं पान की दुकान से भरपाई होगा? जिस बाजार में घाव हुआ है, उसी बाजार में वह घाव भरेगा, वहीं उसकी दवाई होगी।

हम ऐसा भाव रखें कि हमारे से किसी जीव को किंचित्‌मात्र भी दुःख नहीं हो। सारा कर्ज़ चुकता हो जाये ऐसा स्पष्ट भाव रखें। लक्ष्मी तो ग्यारहवाँ प्राण है। इसलिए किसी की लक्ष्मी हमारे पास नहीं रहनी चाहिए। हमारी लक्ष्मी किसी के पास रहे उसमें हर्ज़ नहीं। पर निरंतर यही ध्येय रहना चाहिए कि मुझे पाई-पाई चुकता कर देनी है। ध्येय लक्ष में रखकर आप सारे खेल खेलें। मगर खिलाड़ी मत हो जायें। खिलाड़ी हुए कि आप खतम!

प्रश्नकर्ता : मनुष्य कि नीयत किस कारण खराब होती है?

दादाश्री : उसका खराब होनेवाला हो तब उसे फोर्स (विचार) आये कि 'तू ऐसे मुड़ जा न, फिर देखा जायेगा।' उसका बिगड़नेवाला है इसलिए 'कमिंग इवेन्टस कास्ट धेर शेडोझ बिफोर (जो होनेवाला है उसकी परछाँई पहले पड़ेगी)।'

प्रश्नकर्ता : पर क्या वह उसे रोक पाये?

दादाश्री : हाँ, रोक पाये उसे। यदि उसे यह ज्ञान प्राप्त हुआ हो कि बुरे विचार आने पर उसका पश्चाताप करें, और कहे कि, 'यह गलत है, ऐसा नहीं होना चाहिए।' इस तरह रोक पाये। बुरे विचार जो आते हैं वह मूलतः गत ज्ञान के आधार पर आते हैं, पर आज का ज्ञान उसे ऐसा कहे कि यह (बुरा) करने जैसा नहीं है। तब फिर वह उसे (बुरे कार्य को) रोक सकता है। आया समझ में? कुछ खुलासा हुआ?

नीयत बिगड़ना अर्थात् पाँच लाख रुपयों के लिए बिगाड़ना ऐसा नहीं। यह तो पच्चीस रुपयों के लिए भी नीयत बिगाड़े! अर्थात् इसमें (इस द्रष्टांत में), भूगतने की इच्छा से कोई लेना-देना नहीं है। उसे ऐसे प्रकार का ज्ञान प्राप्त हुआ है कि 'देने में क्या रखा है? देने के बजाय हम ही यहाँ इस्तमाल कर लें। जो होगा देखा जायेगा।' ऐसा उलटा ज्ञान मिला है उसे।

इसलिए हम सभी से कहे कि, भाई चाहे उतने धंधे कीजिए, घाटा आये तो हर्ज नहीं, पर मन में एक भाव तय करना कि मुझे सभी को पैसे लौटाने हैं। क्योंकि पैसा किसको प्यारा नहीं होगा? सब को प्यारा लगे। इसलिए, उसका पैसा डूब जाये ऐसा भाव हमारे मन में पैदा नहीं होना चाहिए। चाहे कुछ भी हो पर मुझे लोटाना है, ऐसा डिसीझन पहले से रखना ही चाहिए। यह बहुत बड़ी चीज़ है। किसी और में नादारी निकली हो तो चलेगा पर पैसे में नादारी नहीं होनी चाहिए। क्योंकि पैसा तो दुःखदायी है, पैसे को तो ग्यारहवाँ प्राण कहा है। इसलिए किसी के भी पैसे डूबो नहीं सकते। वह सबसे बड़ी वस्तु।

प्रश्नकर्ता : मनुष्य कर्ज़ छोड़कर मर जाये तो क्या होगा?

दादाश्री : चाहे कर्ज़ अदा किये बिना मर जाये, पर उसके मन में आखिर तक-मरते दम तक, एक बात तय होनी चाहिए कि मुझे यह पैसे लौटाने ही है। इस अवतार में संभव न हो तब अगले अवतार में भी मुझे अवश्य लौटाने है। जिसका ऐसा भाव है, उसे कोई कष्ट नहीं होगा।

नियम ऐसा है कि पैसे लेते समय ही वह तय कर ले कि इसके पैसे मुझे लौटाने है। फिर उसके बाद हर चौथे दिन उसे याद करके 'यह पैसे जल्दी से जल्दी लौटा दूँ' ऐसी भावना करे। ऐसी भावना होने पर रुपये लौटा सके, वरना राम तेरी माया।

हमने किसी से रुपये उधार लिए हों और हमारा भाव शुद्ध रहे तब समझना कि ये पैसे हम लौटा पायेंगे। फिर उसके लिए चिंता मत करना। भाव शुद्ध रहता है कि नहीं, उतना ही ध्यान रहे, यह उसका लेवल (नाप) है। सामनेवाला भाव शुद्ध रखता है या नहीं, उस पर से हम जान जायें। उसका भाव शुद्ध नहीं रहता हो तो वहीं से हमें समझ लेना चाहिए कि ये पैसे जानेवाले हैं।

भाव शुद्ध होना ही चाहिए। भाव याने, अपने नीतिमत्ता से आप क्या करे? तब कहें कि, 'यदि उतने रुपये होते तो सारे आज ही लौटा देता!' इसका नाम शुद्ध भाव। भाव में तो यही होगा कि जल्दी से जल्दी कैसे लौटा दूँ।

प्रश्नकर्ता : दिवाला निकाले और फिर पैसे नहीं लौटाये तो फिर क्या दूसरे अवतार में चुकाने होंगे?

दादाश्री : उसे फिर पैसों का संयोग प्राप्त ही नहीं होगा। उसके पास पैसा आयेगा ही नहीं। हमारा कानून क्या कहता है कि रुपये लौटाने संबंधी आपका भाव बिगड़ना नहीं चाहिए, तो एक दिन आपके पास रुपया आयेगा और कर्ज़ चुकता होगा। किसी के पास चाहे कितने भी रुपये हों पर आखिर में रुपया कुछ साथ में नहीं आता। इसलिए काम निकाल लीजिए (अपने स्वरूप को पहचान कर मोक्ष मार्ग प्राप्त कर लीजिए)। अब फिर मोक्षमार्ग मिलेगा नहीं। इकासी हजार साल तक मोक्षमार्ग हाथ लगनेवाला नहीं है। यह आखिरी 'स्टेन्ड' (मुकाम) है, अब आगे 'स्टेन्ड' नहीं है (आगे बहुत बुरा वक्त आनेवाला है)।

पैसों का या फिर और किसी संसारी चीज़ का कर्ज़ नहीं होता, राग-द्वेष का कर्ज़ होता है। पैसों का कर्ज़ होता तो हम ऐसा कभी नहीं

कहते कि, 'भाई, पाँच सौ पूरे माँगता हो तो पाँच सौ पूरे लौटा दे वरना तू छूटेगा नहीं।' हम ऐसा कहना चाहते हैं कि, उसका निपटारा करना, पचास देकर भी तू निपटारा करना। और उसे पूछ लें कि, 'तू खुश है न?' और वह कहे कि, 'हाँ मैं खुश हूँ', अर्थात् हो गया निपटारा।

जहाँ-जहाँ आपने राग-द्वेष किये हों, वे राग-द्वेष आपको वापस मिलेंगे।

जैसे भी हो सारा हिसाब (ऋणानुबंध का हिसाब) चुकता करना। हिसाब चुकता करने के लिए यह अवतार है। जन्म से लेकर मृत्यु तक सब (कर्तव्य के अधीन) अनिवार्य है।

एक लेनदार एक आदमी को सता रहा था, वह आदमी मुझे कहने लगा कि, 'यह लेनदार मुझे बहुत गालियाँ सुना रहा था।' मैंने कहा, 'वह आये तब मुझे बुला लेना।' फिर उस लेनदार के आने पर, मैं उस आदमी के घर पहुँचा। मैं बाहर बैठा, भीतर वह लेनदार उसे (आदमी को) कह रहा था, 'आप ऐसी नालायकी करते हैं? यह तो बदमाशी कहलाये।' ऐसा-वैसा करके बहुत गालियाँ देने लगा, तब मैंने अंदर जाकर कहा, 'आप लेनदार है न?' तब कहे, 'हाँ'। मैंने उसे कहा, ''देखिये, मैंने देने का ऐग्रीमेन्ट (करार) किया है और आपने लेने का ऐग्रीमेन्ट किया है। और आप जो ये गालियाँ देते हो, वे 'एकस्ट्रा आइटम' (विशेष वस्तु) है, उसका पेमेंट करना होगा। गालियाँ देने की शर्त करार में नहीं रखी है, प्रत्येक गाली के चालीस रुपये कट जायेंगे। विनय के बाहर बोले तो वह 'एकस्ट्रा आइटम' हुई कहलाये, क्योंकि आप करार से बाहर चले हैं।'' ऐसा कहने पर वह जरूर सीधा हो जाये और दोबारा ऐसी गालियाँ नहीं निकालें।

किसी व्यक्ति ने आपको ढाई सौ रुपये नहीं लौटाये और आपके ढाई सौ रुपये गये, उसमें भूल किसकी? आप ही की न? भुगते उसकी भूल। इस ज्ञान से धर्म होगा, इसलिए सामनेवाले पर आरोप लगाना, कषाय होना, सब छूट जायेगा। अर्थात् 'भुगते उसकी भूल।' यह मोक्ष में ले जायें ऐसा है। एक्झेक्ट है! 'भुगते उसकी भूल।'

प्रश्नकर्ता : यह ज्ञान उत्पन्न हुआ उससे पहले आपकी भूमिका बहुतेक तैयार हो गई होगी न?

दादाश्री : भूमिका यानी मुझे कुछ आता नहीं था। नहीं आने की वज़ह से ही तो मैट्रिक में नापास होकर पड़े रहे। मेरी भूमिका में चारित्र्यबल ऊँचा था इतना मैंने देखा था, फिर भी चोरियाँ की थी। खेतों में बेर आदि होते तब लड़कों के साथ जायें। तब पेड़ किसी का और आम हम लें वह चोरी नहीं कहलाये? बचपन में सब लड़के आम खाने जाये तब हम भी साथ में जाते। मैं खाता जरूर पर घर पर नहीं ले जाता।

दूसरे, जब से धंधा करता हूँ तब से मैंने अपने लिए धंधे के संबंध में विचार ही नहीं किया। हमारा धंधा चलता हो वैसे चलता रहे। पर आपसे मिलने पर सब से पहले पूछूँगा कि आपका कैसे चल रहा है? आपको क्या तकलीफ है? अर्थात् आपका समाधान करूँ, बाद में यह भाई आये तब उनसे पूछूँ कि आपका कैसे चल रहा है? अर्थात् लोगों की अडचनों में ही पड़ा था। सारी जिन्दगी मैंने यही धंधा किया था, और कोई धंधा ही नहीं किया कभी।

फिर भी धंधे में हम ज्यादा माहिर। किसी मुद्दे पर कोई चार महीने से उलझता हो तो उसे मैं एक दिन में सुलझा दूँ।

क्योंकि किसी का भी दुःख मुझ से देखा नहीं जाता। किसी को नौकरी नहीं मिलती हो तब सिफ़ारिशनामा लिख दूँ। ऐसा-वैसा करके हल निकाल दूँ।

मैं धंधा करता था, उसमें हमारे हिस्सेदार के साथ एक नियम बना रखा था, कि अगर मैं नौकरी करता होऊँ तब वहाँ मुझे जितने पैसे मिलें उतने ही घर भेजना। उससे ज्यादा नहीं भेजना। इसलिए वे पैसे बिलकुल खरे होंगे। दूसरे पैसे वहीं धंधे में ही रहें, पीढ़ी में। तब वह मुझ से पूछे, 'फिर उसका क्या करना?' मैंने कहा, 'इन्कम टैक्सवाला कहे, डेढ़ लाख भरपाई कीजिए। तब वे पैसे दादा के नाम से भरपाई कर देना। मुझे खत मत लिखना।'

प्रश्नकर्ता : किसी मनुष्य को हमने पैसे दिये हो और वह नहीं लौटाता हो तो उस समय हमें वापस लेने का प्रयत्न करना चाहिए या फिर कर्ज़ अदा हो गया मानकर संतोष लेकर बैठे रहना चाहिए?

दादाश्री : वह लौटा सके ऐसी स्थिति हो तो प्रयत्न करना और नहीं लौटा सके ऐसी स्थिति हो तो छोड़ देना।

प्रश्नकर्ता : प्रयत्न करना या फिर ऐसा समझना कि वह हमें देनेवाला होगा तो घर बैठे दे जायेगा और यदि नहीं आये तो समझ लेना हमारा कर्ज़ चुकता होगा, ऐसा मान लें?

दादाश्री : नहीं, नहीं, उस हद तक मानने की जरूरत नहीं है। हमें स्वाभाविक प्रयत्न करना चाहिए। हमें उसे कहना चाहिए कि 'हमें जरा पैसों की तंगी है, यदि आपके पास हों तो कृपया हमें भेज दें।' इस तरह विनयपूर्वक कहना चाहिए और नहीं आने पर हम समझें कि हमारा कोई हिसाब होगा जो चुकता हो गया। पर यदि हम प्रयत्न ही नहीं करे तो वह हमें मूरख समझें और उलटी राह चढ़ जाये।

यह संसार सारा पझल है। इसमें मनुष्य मार खा-खा कर मर जाये। अनंत अवतार मार खाया और जब छुटकारे का वक्त आया तब भी अपना छुटकारा नहीं करें। छुटने का ऐसा वक्त फिर नहीं आयेगा न! और जो छुट गया हो (बंधन से मुक्त हुआ हो) वही हमें छुडाये, बंधनग्रस्त हमें केसे छुडाएगा? जो छुट गया हो उसका महत्व है। 'यह पैसे नहीं लौटायेगा तो क्या होगा?', ऐसा विचार आने पर हमारा मन निर्बल होता जाये। इसलिए किसी को पैसे देने के बाद, हम तय कर लें कि काली चिंदी में बाँधकर समंदर में रख छोड़े हैं, फिर क्या आप उसकी आशा रखेंगे? इसलिए देने से पहले ही आशा रखे बिना दीजिए वरना देना ही नहीं।

संसार में लेन-देन तो करना ही पड़ेगा। हमने कुछ व्यक्ति को रुपये उधार दिये हो, उसमें से किसी ने नहीं लौटाए तब उसके लिए मन में क्लेश होता रहे कि, 'वह कब देगा? कब देगा?' अब ऐसे क्लेश करने से क्या फायदा?

हमारे साथ भी ऐसा हुआ था न! पैसे वापस नहीं आयेंगे ऐसी चिंता तो हम पहले से नहीं रखते थे। पर साधारण टकोर करें, उसे (उस व्यक्ति को) कहें जरूर। हमने एक आदमी को पाँच सौ रुपये दिये थे। अब ऐसी रकम बही-खाते में लिखी नहीं होती और ना ही चिठ्ठी में दस्तखत आदि होते हैं। फिर उस वाक़ये को साल-डेढ साल हुआ होगा। मुझे भी कभी याद नहीं आया था। एक दिन वह व्यक्ति मुझे मिल गया, तब मुझे याद आया, मैंने कहा कि, 'वे पाँच सौ रुपये भेज देना।' तब वह कहे, 'कौन से पाँच सौ?' मैंने कहा कि, 'आप मुझसे ले गये थे वे।' वह कहे कि, 'आपने मुझे कब दिये थे? रुपये तो मैंने आपको उधार दिये थे, भूल गये क्या?' तब मैं समझ गया। फिर मैंने कहा कि, 'हाँ मुझे याद आता है, अब आप कल आकर ले जाना।' फिर दूसरे दिन रुपये दे दिये। वह आदमी गला पकड़े कि आप मेरे रुपये नहीं देते, तब क्या करे? ये वास्तविक उदाहरण है।

अर्थात् इस संसार को कैसे पहुँच पायें? हमने किसी को पैसे दिये हों और फिर उसकी आशा रखना वह, पैसे काली चींदी में बाँधकर दरिया में डालकर फिर उसकी आशा करें, ऐसी मूर्खता है। कभी आ जाये तो जमा कर लेना और उस दिन उसे चाय-पानी पीलाकर कहना कि, 'भाई, आपका उपकार है जो आप रुपये लौटाने आये वरना इस काल में तो रुपये वापस आनेवाले नहीं है। आपने लौटाये वह अजूबा ही कहलाये।' वह कहे कि, 'ब्याज नहीं मिलेगा।' तब कहें, 'मूल लाया यही बहुत है।' समझे आप? ऐसा संसार है। लिए है उसे लौटाने का दुःख है, उधार देता है उसे वसूली का दुःख है। अब इसमें सुखी कौन? और (सब) है 'व्यवस्थित'! नहीं देता वह भी 'व्यवस्थित' है, और डबल दिये वह भी 'व्यवस्थित' है।

प्रश्नकर्ता : आपने दूसरे पाँच सौ क्यों दिये?

दादाश्री : फिर किसी अवतार में उस भाई के साथ हमारी मुलाकात नहीं हो, इसलिए।

लोगों को पता चला कि मेरे पास पैसे आये हैं तब लोग मुझ से पैसे माँगने आये। तब फिर मैं १९४२ से १९४४ तक सब को देता रहा। फिर १९४५ में मैंने तय किया कि अब हमें तो मोक्ष की ओर जाना है। अब इन लोगों के साथ हमारा मेल कैसे होगा? मैंने सोचा कि यदि हमने उगाही की तो ये वापस रुपये उधार लेने आयेंगे और व्यवहार चलता रहेगा। उगाही करें तो पाँच हजार लौटाकर फिर दस हजार लेने आयेंगे, उसके बजाय पाँच हजार उसके पास रहेंगे तो उसके मन में होगा कि 'अब ये (दादाजी) मिले नहीं तो अच्छा (ताकि पैसे लोटाने नहीं पड़े)।' और कभी रास्ते में मुझे देखने पर, वह दूसरी ओर से चला जाये। तब मैं भी समझ जाता। बाद में मैंने उगाही करना बंद कीया यानी मैं उनसे छूट गया। क्योंकि मुझे उन सभी के व्यवहार में से मुक्त होना था और इस तरह उगाही बंद कर दी इसलिए उन सभी ने मुझसे संबंध छोड़ दिया।

नेचरल न्याय क्या कहता है? कि जो हुआ सो करेक्ट, जो हुआ सो ही न्याय। यदि आपको मोक्ष पाना हो तो हुआ सो न्याय समझें और यदि भटकना हो तो कोर्ट के न्याय से निबटारा लाइये। कुदरत क्या कहती है? हुआ सो न्याय ऐसा आपने मान लिया तो आप निर्विकल्प होते जायेंगे, और कोर्ट के न्याय से यदि निबटारा लाने गये तो विकल्पी होते जायेंगे।

तीन-तीन बार चक्कर काटें, फिर भी उगाहीवाला मिले नहीं और यदि मिल जाये तो उलटा वह हम पर चिढ़ जाये। यह मार्ग ऐसा है कि उगाहीवाला हमे घर बैठे पैसे देने आये। जब पाँच-सात बार उगाही करने पर आखिर में वह कहे कि महीने बाद आना, तब भी आपके परिणाम नहीं बदलते तो घर बैठे पैसे आयेंगे। पर आपके परिणाम बदल जाते हैं न?

'यह तो कमअक्ल है। नालायक आदमी है, फ़िजूल धक्का खिलाया।' ऐसे, परिणाम बदले हुए होते हैं। तब फिर से आप जाये तो वह गालियाँ सुनाये। आपके परिणाम बदल जाने के कारण, सामनेवाला बिगड़ता नहीं हो तो भी बिगड़े।

प्रश्नकर्ता : इसका अर्थ यह हुआ कि सामनेवाला हमारी वजह से ही बिगड़ता है?

दादाश्री : हमने ही हमारा सबकुछ बिगाड़ा है। हमारी जितनी भी मुसीबतें हैं, वे सभी हमने ही खड़ी की है। अब उसे सुधारने का रास्ता क्या? सामनेवाला कितना भी दुःख देता हो, पर उसके लिए जरा-सा भी उलटा विचार नहीं आये, वह उसे सुधारने का रास्ता। इसमें हमारा भी सुधरेगा और उसका भी सुधरेगा। संसार के लोगों को उलटा विचार आये बगैर नहीं रहता, तभी तो हमने समभाव से निपटारा करने को कहा। समभाव से निपटारा माने क्या कि उसके लिए कुछ भी उलटा सोचना ही नहीं।

और उगाही करने पर खुद के पास न होने के कारण कोई आदमी देता नहीं हो, तब फिर आखिर तक उसके पिछे दौडते नहीं रहना। वह बैर बाँधेगा! और प्रेतयोनि में गया तो हमें परेशान कर देगा। उसके पास नहीं है इसलिए नहीं देता, उसमें उस बेचारे का क्या कसूर? लोग तो होने पर भी नहीं देते!

प्रश्नकर्ता : होने पर भी नहीं दें तो क्या करना?

दादाश्री : होने पर नहीं दें तो क्या कर लेंगे हम उसका? दावा दायर करेंगे! और क्या? उसे मारेंगे तो पुलिसवाले हमें पकड़कर ले जायेंगे न?

कोर्ट में न जायें वही उत्तम। जो सयाना मनुष्य होगा वह कोर्ट नहीं जायेगा।

कोई आपके पास से रुपये ले गया हो और इस बात को तीन-चार साल बीत जाये, तब आपकी रकम शायद कोर्ट के कानून से बाहर हो जाये पर नेचर (कुदरत) का कानून तो कोई नहीं तोड़ सकता न! कुदरत के कानून अनुसार रकम ब्याज सहित वापस आती है। यहाँ (कोर्ट) के कानून अनुसार कुछ नहीं मिले, यह तो सामाजिक कानून

है। पर उस कुदरत के कानून में तो ब्याज सहित मिलती है। इसलिए कभी कोई हमारे तीन सौ रुपये नहीं लौटाता हो तो हमें उनसे उगाही करनी चाहिए। वापस लेने का कारण क्या है? यह भाई रकम ही नहीं लौटाता तब कुदरत का ब्याज तो कितना भारी होता है? सौ-दौ सौ साल में तो रकम कितनी भारी हो जायेगी? इसलिए उगाही करके हमे उनसे वापस ले लेने चाहिए, जिससे बेचारे को उतना भारी जोखिम उठाना नहीं पड़े। पर वह नहीं लौटाए और जोखिम मोल ले उसके जिम्मेवार हम नहीं है।

प्रश्नकर्ता : कुदरत के ब्याज की दर क्या है?

दादाश्री : नेचरल इन्टरेस्ट इज् वन परसेन्ट ऐन्यूअली। अर्थात् सौ रुपये पर एक रुपया! अगर वह तीन सौ रुपये नहीं लौटाता तो हर्ज नहीं। हम कहें, हम दोनों दोस्त! हम साथ में पत्ते खेलें। क्योंकि हमारी तो कोई रकम जानेवाली नहीं है न! यह नेचर (कुदरत) इतनी करेक्ट (सही) है कि यदि आपका एक बाल ही चुराया होगा, तो वह भी जानेवाला नहीं है। नेचर बिलकुल करेक्ट है। परमाणु से लेकर परमाणु तक करेक्ट है। इसलिए वकील करने जैसा संसार ही नहीं है। मुझे चोर मिलेगा, लुटेरा मिलेगा ऐसा भय भी रखने जैसा नहीं है। यह तो पेपर में आये कि आज फलाँ को गाडी से उतारकर गहने लूट लिए, फलाँ को मोटर में मारकर पैसे ले लिए। 'तो अब सोना पहनना कि नहीं पहनना?' डोन्ट वरी! (चिंता छोडो) करोड रुपयों के रत्न पहनकर फिरोगे तब भी आपको कोई छू नहीं सकता। ऐसा यह संसार है। और वह बिलकुल करेक्ट है। यदि आपकी जिम्मेवारी होगी तभी आपको छूएगा। इसलिए हम कहते हैं कि आपका ऊपरी (मालिक) कोई भी नहीं है। 'डोन्ट वरी!' (चिंता छोडिए) निर्भय हो जाइये।

धंधे में बिना हक़ का (हराम का) नहीं पैठना चाहिए । और जिस दिन बिना हक़ का आ जायेगा, उस दिन से धंधे में बरकत नहीं रहेगी। भगवान हाथ डालते ही नहीं। धंधे में तो आपकी कुशलता और आपकी

नीतिमत्ता दो ही काम आयेंगे। अनीति से साल-दो साल ठीक मिलेगा पर फिर नुकसान होगा। गलत होने पर अगर पछतावा करोगे तो भी छूट जाओगे। व्यवहार का सारा सार नीति ही है। पैसे कम होंगे परन्तु नीति होगी तो भी आपको शांति रहेगी और बिना नीति के, पैसे ज्यादा होने पर भी अशांति रहेगी। धर्म की नींव ही नैतिकता है।

इसका तात्पर्य यह है कि पालन कर सकें तो संपूर्ण नीति का पालन कीजिए और ऐसा पालन नहीं हो सकें तो निश्चय कीजिए कि दिन में तीन बार तो मुझे नीतिपालन करना ही है, या फिर नियम में रहकर अनीति करें तो वह भी नीति है। जो आदमी नियम में रहकर अनीति करता है उसे मैं नीति कहता हूँ। भगवान के प्रतिनिधि के तौर पर, वीतरागों के प्रतिनिधि के तौर पर मैं कहता हूँ कि अनीति भी नियम में रहकर करें, वह नियम ही तुम्हें मोक्ष में ले जायेगा। अनीति करें कि नीति करें, मेरे लिए इसका महत्व नहीं है, पर नियम में रहकर करें। नियम बनाइये कि मुझे इतनी मात्रा में ही अनीति करनी है, इससे ज्यादा नहीं। प्रतिदिन दस रुपये दुकान पर अधिक लेने है, उससे अधिक पाँच सौ रुपये आने पर भी मुझे नहीं लेने है।

यह हमारा गूढ़ वाक्य है। यह वाक्य यदि समझ में आ जाये तो कल्याण ही हो जाये। भगवान भी खुश हो जाये कि परायी चरागाह (चरने का स्थान) में चरना है फिर भी अपनी आवश्कता जितना ही चरता है! वरना परायी चरागाह में चरना हो वहाँ फिर प्रमाण होता ही नहीं न?!

आपकी समझ में आता है न? कि अनीति का भी नियम रखें। मैं क्या कहता हूँ कि, 'तुझे रिश्वत नहीं लेनी और तुझे पाँच सौ की कमी है, तब क्लेश कहाँ तक करेगा?' लोगों से-मित्रों से रुपये उधार लेते हैं, इससे ज्यादा जोखिम उठाते हैं। इसलिए मैं उन्हें समझाता हूँ कि 'भाई तू अनीति कर, पर नियम से कर।' अब नियम से अनीति करनेवाला नीतिमान से श्रेष्ठ है। क्योंकि नीतिमान के मन में ऐसा रोग पैठेगा कि 'मैं कुछ हूँ'। जब कि नियम से अनीति करनेवाले के मन को ऐसा रोग नहीं लगेगा?

ऐसा कोई सिखायेगा ही नहीं न? नियम से अनीति करना वह कोई साधारण कार्य नहीं।

अनीति भी नियम से है तो उसका मोक्ष होगा, पर जो अनीति नहीं करता, जो रिश्वत नहीं लेता उसका मोक्ष कैसे होगा? क्योंकि जो रिश्वत नहीं लेता उसे, 'मैं रिश्वत नहीं लेता' यह कैफ़ चढ़ा होता है। भगवान भी उसे निकाल बाहर करेंगे कि, 'भाग यहाँ से, तू बदसूरत लगता है।' इसका यह अर्थ नहीं कि हम रिश्वत लेने को कहते हैं, पर यदि तुझे अनीति ही करनी हो तो तू नियम से करना। नियम करना कि भाई मैं रिश्वत में पाँच सौ रुपये ही लूँगा। पाँच सौ से ज्यादा कुछ भी दें, अरे पाँच हजार रुपये दें तब भी नहीं लूँगा। हमें घर खर्च में कम पड़ते हों उतने ही, पाँच सौ रुपये ही रिश्वत के लेना। बाकी, ऐसी जिम्मेवारी तो हम ही लेते हैं। क्योंकि ऐसे काल में लोग रिश्वत नहीं ले तो क्या करें बेचारे? तेल-घी के दाम कितने ऊपर चढ़ गये हैं। शक्कर के दाम कितने ऊँचे हैं? तब बच्चों की फ़ीस के पैसे दिये बिना थोड़े चलेगा?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : व्यापारी काला बाज़ार करते हैं, तब उनका गुज़ारा होता है! इसलिए हम कहते हैं कि रिश्वत भी नियम से लेना। तो वह नियम तुझे मोक्ष में ले जायेगा। रिश्वत बाधारूप नहीं है, अनियम बाधारूप है।

प्रश्नकर्ता : अनीति करना तो गलत ही कहलाये न?

दादाश्री : वैसे तो उसे गलत ही कहते है न! पर भगवान के घर तो अलग ही तरह की व्याख्या है। भगवान के यहाँ तो नीति या अनीति, इसका झगड़ा ही नहीं है। वहाँ पर तो अहंकार ही बाधारूप होता है। नीति पालनेवालों के अहंकार बहुत होता है। उसे तो बगैर मदिरा के कैफ़ चढा होता है।

प्रश्नकर्ता : अब रिश्वत में पाँच सौ लेने की छूट दी तो फिर ज्यों-ज्यों ज़रूरत बढ़ती जाये त्यों-त्यों वह अधिक रकम ले तब?

दादाश्री : नहीं, वह तो एक नियम, पाँच सौ माने पाँच सौ ही, फिर उस नियम में ही रहना होगा।

इस समय मनुष्य इन सब मुश्किलो में किस तरह दिन गुज़ारे? और फिर उसकी रुपयों की कमी पूरी नहीं होगी तो क्या होगा? उलझन पैदा होगी कि रुपयों की जो कमी है वे कहाँ से लायें? यह तो जितनी कमी थी उतने आ गये। उसका भी पझल फिर सोल्व हो गया न? वरना इसमें से मनुष्य उलटी राह चल पड़े और फिर उलटी राह आगे बढ़ता रहे और रिश्वतखोरी पर उतर आये। उसके बजाय यह बीच का रास्ता निकाला है, जिससे अनीति करने पर भी नीति कहलाये और उसे भी सरलता हो जाये, नीति कहलाये और उसका घर चले।

मूल वस्तुतः मैं क्या कहना चाहता हूँ यह यदि समझ में आ जाये तो कल्याण हो जाये। प्रत्येक वाक्य के द्वारा मैं क्या कहना चाहता हूँ यह सारी बात यदि समझ में आये तो कल्याण हो जाये। पर यदि वह अपनी भाषा में ले जाये तो क्या करें? प्रत्येक की अपनी स्वतंत्र भाषा होगी ही, वह ले जाकर अपनी भाषा में फिट (अनुकूल) कर देगा, पर यह उसकी समझ में नहीं आयेगा कि 'नियम से अनीति करें।'

हम (दादाजी) भी व्यापारी लोग हैं। संसार में धंधा-रोजगार, इन्कमटैक्स आदि सभी हमारे भी हैं। हम कान्ट्रैकट का नंगा व्यवसाय करते हैं। फिर भी उसमें हम संपूर्ण 'वीतराग' रहते हैं। ऐसे 'वीतराग' कैसे रह पाते हैं? 'ज्ञान से।' अज्ञान से लोग दुःखी हो रहे हैं।

प्रश्नकर्ता : 'गलत' करने की इच्छा नहीं है, फिर भी करना पड़ता है।

दादाश्री : वह अनिवार्य करना पड़े, उसका पछतावा होना चाहिए। आधा घंटा बैठकर पछतावा करना चाहिए कि, 'यह नहीं करना है फिर भी करना पड़ता है।' हमारा पछतावा ज़ाहिर किया माने हम गुनाह से बरी हुए। और यह तो हमारी इच्छा नहीं होने पर भी, अनिवार्य करना पड़ता है, उसका प्रतिक्रमण करना पड़े। 'ऐसा ही करना चाहिए' (यह भाव रहा)

तो उसको उलटा परिणाम आयेगा। ऐसा करके प्रसन्नता होती हो ऐसे भी मनुष्य हैं न? यह तो आपकी मंद कर्म (सरलता) की वज़ह से ऐसा पछतावा होगा, वरना लोगों को तो पछतावा भी नहीं होता।

अधिक धन हो तो किसी भगवान के या सीमंधर स्वामी के मंदिर में देने योग्य है, दूसरा एक भी स्थान नहीं है और कम पैसे हो तो महात्माओं को भोजन कराने जैसा दूसरा कुछ भी नहीं है। और उससे भी कम होने पर किसी दुखिये को देना। पर वह नक़द नहीं, खाने-पीने का सामान आदि पहुँचाना। अब कम पैसे होने पर भी दान कर सकें या नहीं?

[४] ममता-रहितता

हमारे पाप में कोई हिस्सेदारी नहीं करता। हम लडके से पूछें कि, 'भाई, हम यह चोरियाँ कर-कर के धन कमाते हैं।'। तब वह कहे, 'आपको कमाना हो तो कमाइये, हमें ऐसा नहीं चाहिए।' पत्नी भी कहे, 'सारीं जिन्दगी उलटे-सीधे किए हैं, अब छोड दीजिए न।' तब भी ये मूर्ख नहीं छोडेगा।

किसी को देना सिखा तब से सद्बुद्धि उत्पन्न हुई। अनंत अवतार से देने को सिखा ही नहीं। जुठन भी देना उसे पसंद नहीं है ऐसा मनुष्य स्वभाव! ग्रहण करना ही उसकी आदत है! जब जानवर में था तब भी ग्रहण करने की ही आदत, देने का नहीं! वह जब से देने को सिखें तब से मोक्ष की ओर मुड़ें।

चेक आया तब से ही समझिए न कि इसे भुनाऊँगा तो पैसे आयेंगे! (पुण्य का फल आने पर सुख मिलेगा।) तब यह तो (पुण्य का) चेक लेकर आये थे और वह आज भुनाया आपने! भुनाया उसमें क्या मेहनत की आपने? इस पर लोग कहें, 'मैं इतना कमाया, मैंने मेहनत की!' अरे! एक चेक भुनाया उसे क्या मेहनत की कहलाये? वह भी फिर चेक जितने का हो उतना ही प्राप्त हो। उससे ज्यादा नहीं मिलेगा न? (पुण्य हो उतना ही मिलेगा, ज्यादा नहीं) यह समझे आप?

मेरा कहना है कि गंभीरता धारण कीजिए, शांति रखिये, क्योंकि जिस पूरण-गलन के लिए लोग दौड़धूप कर रहे हैं वे उनके अवतार व्यर्थ गँवाते हैं और बैंक-बैलेंस में कोई फर्क होनेवाला नहीं है, वह नेचरल (कुदरती) है। नेचरल में क्या करनेवाले हैं? इसलिए हम यह आपका भय भगाते हैं। हम 'जैसा है वैसा' खुला कर रहे हैं कि जोडना-घटना (कमाना या गँवाना) किसी के हाथ में नहीं है, वह नेचर के हाथों में है। बैंक में जोड़ना वह भी नेचर के हाथ में और बैंक में घटाना यह भी नेचर के हाथ में है। वरना बैंकवाले एक ही खाता रखतें। क्रेडिट अकेला ही रखता, डेबिट रखता ही नहीं।

किसी के साथ विवाद (किच-किच) मत करना। और फिर वैसे लोग कभी कभार ही मिलेंगे! अब उनके साथ झगडक़र क्या प्राप्त होनेवाला है? (हम) एक बार कह दें कि 'भगवान को तो याद कर' तब वह कहे, 'भगवान कौन भला?' ऐसे शब्द निकलें तो समझ लें कि यह विद्रोही है।

लाचारी जैसा दूसरा पाप नहीं है! लाचारी नहीं होनी चाहिए। नौकरी नहीं मिलती हो तो लाचारी, घाटा हुआ तब भी लाचारी, इन्कमटैक्स आफ़िसर धमकाता हो तब भी लाचारी। अरे, लाचारी क्यों करता है। ज्यादा से ज्यादा वह क्या करेगा? पैसे ले जायेगा, घर ले जायेगा, और क्या ले लेगा? तब लाचारी किसके लिए? लाचारी तो भगवान का अपमान कहलाये। हम लाचारी करें तो भीतर भगवान का भयंकर अपमान होता है। मगर क्या करे भगवान?

व्यावहारिक कानून क्या है! शेयरबाज़ार में घाटा हुआ हो तो किराना बाज़ार से भरपाई मत करना। शेयरबाज़ार से ही भरपाई करना।

बहुत सारे मच्छर होंगे तब भी सारी रात सोने नहीं देंगे और दो होंगे तब भी सारी रात सोने नहीं देगे। तो हम कहें कि 'हे मच्छरमय दुनिया! दो ही सोने नहीं देते तो सारे एक साथ आओ न!' ये मुनाफा-घाटा, मच्छर ही कहलाये। मच्छर तो आते ही रहेंगे। हम उन्हें उड़ाते रहें और सो जायें।

भीतर अनंत शक्ति है। वे शक्तिवाले क्या कहते हैं कि 'हे चन्दुभाई। आपका क्या विचार है?' तब भीतर, बुद्धि बोले कि 'इस धंधे में इतना घाटा हुआ है। अब क्या होगा? अब नौकरी करके घाटा पूरा कीजिए।' भीतर अनंत शक्तिवाले क्या कहते हैं, 'हमसे पूछिये न, बुद्धि की सलाह क्यों लेते हैं? हमसे पूछिये न, हमारे पास अनंत शक्ति है। जो शक्ति घाटा कराती है उसी शक्ति के पास ही मुनाफा खोजिए न! घाटा कराती है दूसरी शक्ति और मुनाफा खोजते हैं और कहीं। इससे तालमेल कैसे बैठेगा?' भीतर अनंत शक्ति है। आपका 'भाव' परिवर्तित नहीं हुआ तो इस संसार में ऐसी कोई शक्ति नहीं जो आपकी इच्छानुसार नहीं फिरे। ऐसी अनंत शक्ति हम सबके भीतर है। पर किसी को दुःख नहीं हो, किसी की हिंसा नहीं हो, ऐसे हमारे लॉ (कानून) होने चाहिए। हमारे भाव का लॉ इतना कठिन होना चाहिए कि देह जायेगी पर हमारा भाव नहीं टूटेगा। देह भले ही चली जाये, उसमें डरने की जरूरत नहीं है। ऐसे डरते रहें तो कैसे चलेगा, कोई सौदा ही नहीं कर पाये। हमने तो ऐसे बड़े-बड़े दलाल देखें हैं, जो चालीस लाख रुपये की उगाही की बातें करता हो और ऊपर से ऐसा कहते हैं कि, दादाजी, अधिकतर सभी लोग उलटा बोलते (डरातें) हैं, तो क्या होगा? तब मैंने कहा, जरा धीरज रखनी पड़ेगी, नींव मज़बूत होनी चाहिए। रास्ते पर गाडियाँ इतनी तेज़ चलती हैं, फिर भी सब सलामत रहते हैं, तब क्या धंधे में से सेफ (सलामत) नहीं निकलेंगे? रास्ते पर, ज़रा ज़रा में टकरा जायेंगे ऐसा लगे, पर टकराते नहीं। क्या सभी टकरा जाते हैं? अर्थात् जिस जगह घाव लगे उसी जगह भर जायेगा, इसलिए जगह मत बदलिए। नियम भी यही है।

हमारी जो-जो शक्ति हो उससे हम ऑब्लाइज (उपकृत) करें। तरीक़ा चाहे कोई भी हो, सामनेवाले को, सभी को सुख पहुँचाना। सुबह तय करना चाहिए कि आज मुझे जो कोई भी मिले उसे कुछ सुख पहुँचाना है। पैसे नहीं दे सकते तब भी सुख पहुँचाने के अन्य कई रास्ते हैं। समझा सकते हैं। कोई उलझन में हो तो धैर्य बँधाना चाहिए और पैसों से भी मदद कर सकते हैं न!

जितनी जिम्मेवारी से (दिल से) परायों का करें वह खुद का (कल्याण) करें।

प्रश्नकर्ता : परायों का करें वह खुद का करें। यह किस तरह?

दादाश्री : सभी आत्माएँ सम-स्वभाव हैं। इसलिए जो परायों की आत्मा के लिए करे वह खुद की आत्मा को पहुँचे। और जो परायों की देह के लिए करे वह भी पहुँचे। फर्क सिर्फ इतना है, जो आत्मा के लिए करे वह अन्य रीति से पहुँचे, उसका मोक्ष में जाने का रास्ता खुल जाये। और अकेली देह के लिए करें तो यहाँ (संसार में) सुख भोगते रहें। अर्थात्, इतना फर्क है।

प्रश्नकर्ता : मेरे मामा ने मुझे धंधे में फँसाया, वह जब-जब याद आता है तब मुझे मामा के लिए बहुत उद्वेग होता है कि उन्हों ने ऐसा क्यों किया होगा? मैं क्या करुँ? कोई समाधान नहीं मिलता?

दादाश्री : ऐसा है कि भूल तेरी है, इसलिए तुझे तेरे मामा फँसाते हैं। जब तेरी भूल नहीं रहेगी तब तुझे कोई फँसानेवाला नहीं मिलेगा। जहाँ तक आपको फँसानेवाले मिलते हैं न वहाँ तक आपकी ही भूलें हैं। मुझे (दादाजी को) क्यों कोई फँसानेवाला नहीं मिलता? मुझे फँसना है फिर भी मुझे कोई नहीं फाँसता और तुझे कोई फाँसने आये तो तू छटक जायेगा! पर मुझे तो छटकना भी नहीं आता। अर्थात् आपको कोई कहाँ तक फाँसेगा? जहाँ तक आपके बहीखाते का कुछ हिसाब बाकी है, लेन-देन का हिसाब बाकी है, वहाँ तक ही आपको फँसेंगे। मेरे बहीखाते के सारे हिसाब चुकता हो गये हैं। कुछ समय पहले तो मैं लोगों से यहाँ तक कहता था कि भाई जिसे भी पैसे की तंगी हो, वह मुझे एक धौल देकर मुझ से पाँच सौ ले जाना। तब वे लोग कहें कि, नहीं भैया, इस तंगी से तो मैं जैसे-तैसे निपट लूँगा, पर आपको मैं धौल दूँगा तो मेरी क्या गत होगी?

अर्थात् वर्ल्ड (संसार) में तुझे कोई फाँसनेवाला नहीं है क्योंकि वर्ल्ड का तू मालिक है, तेरा कोई मालिक ही नहीं है। जहाँ तक खुद

के स्वरूप की पहचान से विमुख है, वहाँ तक खुदा अकेले ही तेरे मालिक है। पर यदि तू खुद को (आत्मा को) पहचान ले फिर कोई तेरा मालिक ही नहीं रहा। फिर कौन फाँसनेवाला है वर्ल्ड में? कोई हमारा नाम लेनेवाला नहीं है। पर देखो न, कितना सारा फँसाव हो गया है!

इसलिए, मामा ने मुझे फँसाया है ऐसा मन से निकाल देना और व्यवहार में कोई पूछें तब ऐसा मत कहना कि मैंने उन्हें फँसाया था, इसलिए उन्हों ने मुझे फँसाया! क्योंकि लोग यह विज्ञान नहीं जानते हैं, इसलिए उनकी भाषा में बात करनी चाहिए कि मामा ने ऐसा किया। पर अंदर हम समझें कि इसमें मेरी ही भूल थी। और बात भी सही है न, क्योंकि मामा आज भुगत नहीं रहे, वे तो गाडी लाकर मजें लूट रहे हैं। कुदरत उन्हें पकडेगी तब उनका गुनाह साबित होगा और आज तो कुदरत ने तुझे पकड़ा है न!

दुकान पर नहीं जायें तो कमाई नहीं होगी। वैसे ही यहाँ सत्संग में, आपके पास अधिक समय नहीं होने पर भी पाँच-दस मिनट आकर दर्शन कर जाइये, यदि हम (दादाजी) यहाँ है तब आपको, हाजिरी तो देनी ही रही न!

दादाजी से सहाय की माँग वह तो बेरर चेक, ब्लेन्क (कोरे) चेक जैसा कहलाये। उसे हर घड़ी मत खर्च कीजिए, खास अडचन आने पर ज़ंजीर खींचना। सीगरेट का पेकेट गिर गया हो और हम गाड़ी की ज़ंजीर खींचे तो दंड होगा कि नहीं होगा? अर्थात् ऐसा दुरुपयोग मत करना।

प्रश्नकर्ता : हाल में टैक्स इतने बढ़ गये हैं कि (टैक्स की) चोरी किये बिना बड़े धंधे का समतोलन करना मुश्किल है। सभी रिश्वत माँगते हैं तो इसके लिए चोरी तो करनी ही होगी न?

दादाश्री : चोरी करें मगर आपको पछतावा होता है कि नहीं? पछतावा होने पर भी वह हलका हो जाये।

प्रश्नकर्ता : तो फिर ऐसे संयोगों में क्या करना चाहिए?

दादाश्री : हम समझें कि यह गलत हो रहा है, वहाँ हमें हार्टिली (हृदय से) पछतावा करना चाहिए। भीतर में पछतावे की जलन होनी चाहिए तभी छूटा जायेगा। आज कुछ काले बाज़ार का माल लाये तो फिर उसे काले बाज़ार में ही बेचना होगा। तब चन्दुलाल से कहना कि प्रतिक्रमण कीजिए। हाँ, पहले प्रतिक्रमण नहीं करते थे इसलिए कर्म के इतने सारे तालाब भरे। अब प्रतिक्रमण किया इसलिए शुद्ध कर डाला। लोहा काले बाज़ार में बेचा तो हम चन्दुलाल से कहें, ''चन्दुलाल, बेचो इसमें हर्ज नहीं है, वह 'व्यवस्थित' के अधीन है। पर अब उसका प्रतिक्रमण कर लीजिए और कहिए कि ऐसा दुबारा नहीं होगा।''

एक आदमी कहे, 'मुझे धर्म नहीं चाहिए। भौतीक सुख चाहिए।' उसे मैं कहूँगा, 'प्रामाणिक रहना, नीति पालना।' मंदिर जाने को नहीं कहूँगा। दूसरों को तू देता है वह देवधर्म है। पर दूसरों का बिना-हक़ के (हराम का) लेता नहीं है यह मानवधर्म है। अर्थात् प्रामाणिकता यह सबसे बड़ा धर्म है। डीसऑनेस्टी इज् धी बेस्ट फूलिशनेस (अप्रामाणिकता माने सर्वोत्तम मूर्खता)। पर ऑनेस्ट नहीं रह पाते, तब क्या करें? दादाजी सिखाते हैं कि डीसऑनेस्टी (अप्रामाणिक होने) का प्रतिक्रमण करो। अगला अवतार तुम्हारा प्रकाशमय (सुधर) जायेगा। डीसऑनेस्टी को डीसऑनेस्टी समझों और उसका पश्चाताप करो। पश्चाताप करनेवाला मनुष्य ऑनेस्ट है यह निश्चित है।

अनीति से पैसे कमाये, वगैरह सभी के उपाय बताये गये हैं। अनीति से पैसे कमाने पर रात को 'चन्दुलाल' से कहना कि बार-बार प्रतिक्रमण कीजिए, अनीति से क्यों कमाये? इसके लिए प्रतिक्रमण कीजिए। रोजाना ४००-५०० प्रतिक्रमण करवाना। खुद शुद्धात्मा को नहीं करने हैं। 'चन्दुलाल' के पास करवाना। जिसने अतिक्रमण किया उसके पास प्रतिक्रमण करवाना।

अभी हिस्सेदार के साथ मतभेद हो जाये तो तुरन्त आपको पता चल जायेगा कि यह ज़रूरत से ज्यादा बोल दिया। इससे तुरन्त उसके नाम का प्रतिक्रमण करना। हमारा प्रतिक्रमण कैश पेमेन्ट (नक़द) होना चाहिए। यह बैंक भी कैश कहलाये और पेमेन्ट भी केश कहलाता है।

इस संसार में अंतराय कैसे पड़ता है यह मैं आपको समझाऊँ। आप जिस आफिस में नौकरी करते हैं वहाँ आपके असिस्टन्ट (सहायक) को बगैर अक्ल का कहें, वह आपकी अक्ल पर अंतराय पड़ा। बोलिये, अब इस अंतराय से सारा संसार फँसकर यह मनुष्य जन्म व्यर्थ गँवाता है! आपको 'राइट' (अधिकार) ही नहीं है, सामनेवाले को बिना अक्ल का कहने का। आप ऐसा बोलें इसलिए सामनेवाला भी उलटा बोलेगा, इससे उसे भी अंतराय पड़ेगा। बोलिये अब, इस संसार में अंतराय पड़ने कैसे बंद होंगे? किसी को आपने नालायक कहा तो आपकी लियाक़त (पात्रता) पर अंतराय पड़ता है। आप तुरन्त ही इसका प्रतिक्रमण करें तो अंतराय पड़ने से पहले धुल जायेगा।

प्रश्नकर्ता : नौकरी के फर्ज़ अदा करते, मैंने बहुत कड़ाई से लोगों के अपमान किये थे, दुत्कार दिया था।

दादाश्री : इन सभी का प्रतिक्रमण करना। उसमें आपका इरादा बुरा नहीं था, अपने खुद के लिए नहीं, सरकार के लिए किया था सब। इसलिए वह सिन्सीयारीटी (निष्ठा) कहलाये।

[५] लोभ से खड़ा संसार

जो चीज़ प्रिय हो गई हो उसी में मूर्छित रहना, उसका नाम लोभ। वह चीज़ प्राप्त होने पर भी संतोष नहीं होता। लोभी तो, सुबह जागा तब से रात आँख मुँदने तक, लोभ में ही रहेगा। सुबह जागा तब से लोभ की ग्रंथि जैसे दिखाये वैसे किया करें। लोभी हँसने में भी वक्त नहीं गँवाता, सारा दिन लोभ में ही होगा। लोभी, सब्ज़ी बाज़ार जाये तब भी सस्ती ढेरियाँ खोज़कर सब्जी लेगा।

लोभी व्यक्ति भविष्य के लिए सारा जमा करें। फिर बहुत जमा होने पर, दो बड़े-बड़े चूहे घुस जाये और सब सफाया कर जाये!

लक्ष्मी जमा करना, पर बगैर इच्छा के। लक्ष्मी आती हो तो रोकना नहीं और नहीं आती तो गलत उपायों से उसे खींचना नहीं।

लक्ष्मीजी तो अपने आप आने के लिए बंधी हुई है। ऐसे हमारे संग्रह करने से संग्रहित नहीं होती कि आज संग्रह करें और पच्चीस साल बाद, बेटी ब्याहते समय तक रहेगी। उस बात में कुछ नहीं रखा है।

जो वस्तुएँ सहज में मिले उनका इस्तमाल करना, फेंक मत देना। सद्रास्ते इस्तेमाल करना। बहुत जमा करने की इच्छा नहीं करनां। जमा करने का एक नियम होना चाहिए कि हमारी पूँजी में इतना (अमुक मात्रा में) तो चाहिए। फिर उतनी पूँजी रखकर, शेष योग्य जगह पर खर्च करना। लक्ष्मी को फेंक नहीं सकते।

लोभ का प्रतिपक्ष शब्द है संतोष। पूर्वभव में थोड़ा-बहुत ज्ञान समझा हो, आत्मज्ञान नहीं पर संसारी ज्ञान समझा हो तब उसे संतोष उत्पन्न हुआ हो। और जहाँ तक ऐसा ज्ञान उसकी समझ में नहीं आता वहाँ तक लोभ बना रहेगा।

अनंत अवतार खुद ने इतना कुछ भोगा हो, उसका फिर उसे संतोष रहे कि अब कुछ नहीं चाहिए। और जिसने नहीं भोगा हो, उसे कुछ न कुछ लोभ बना रहेगा। फिर उसे, यह भुगतें (भोगें), वह भुगतें, फलाँ भुगतें, ऐसा रहा करेगा।

प्रश्नकर्ता : लोभी थोड़ा कंजूस भी होगा न?

दादाश्री : नहीं। कंजूस, वह अलग है। कंजूस तो अपने पास पैसे नहीं होने की वजह से कंजूसी करता है। और लोभी तो घर में पच्चीस हजार पड़े होने पर भी गेहूँ चावल सस्ते कैसे मिलें, घी कैसे सस्ता मिले, ऐसे जहाँ-तहाँ उसका चित्त लोभ में ही होगा। सब्ज़ी बाज़ार जाये तो किस जगह सस्ती ढेरियाँ मिलती है वही खोजता रहता हो!

लोभी कौन कहलाये कि जो हर एक बात में जाग्रत हो।

प्रश्नकर्ता : लोभी और कंजूस में क्या फर्क?

दादाश्री : कंजूस तो केवल लक्ष्मी की ही कंजूसी करे। लोभी तो हर तरफ से लोभ में रहेगा। मान का भी लोभ करे और लक्ष्मी का भी

करे। लोभी को हर तरह का लोभ होगा जो उसे हर जगह खीच जाये।

प्रश्नकर्ता : लोभी होना कि किफ़ायतशार (किफ़ायतरूप से बचत करनेवाला)?

दादाश्री : लोभी होना वह गुनाह है। किफ़ायतशार होना वह गुनाह नहीं है।

'इकोनोमी' (किफ़ायत) किसका नाम? पैसे आये तब खर्च भी करे और तंगी में पैसों के लिए दौड़-धूप भी नहीं करे। हमेशा कर्ज़ लेकर कार्य मत करना। कर्ज़ लेकर व्यापार कर सकते हैं मगर मौज-शौक नहीं कर सकते। कर्ज़ लेकर कब खाये? जब मरने का वक्त आये तब। वरना कर्ज़ लेकर घी नहीं पी सकते।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, कंजूसी और किफ़ायत में अंतर है क्या?

दादाश्री : हाँ, बड़ा अंतर है। हजार रुपये माहवार कमाते हों तो आठ सौ रुपयें खर्च करना, और पाँच सौ आते हों तो चार सौ खर्च करना, इसका नाम किफ़ायत। जब कि कंजूस तो चार सौ के चार सौ ही खर्च करेगा, फिर भले ही हजार आये कि दो हजार आये। वह टैक्सी में नहीं जायेगा। किफ़ायत तो, इकोनोमिक्स-अर्थशास्त्र है। किफ़ायतशार तो भविष्य की मुश्किलों पर नज़र रखे। कंजूस को देखकर दूसरों को चीढ़ होगी कि कंजूस है। किफ़ायतशार को देखकर चीढ़ नहीं होगी।

घर में किफ़ायत कैसी होनी चाहिए? बाहर खराब नहीं दिखें ऐसी किफा़यत होनी चाहिए। किफ़ायत रसोई में पहुँचनी नहीं चाहिए। उदार किफ़ायत होनी चाहिए। रसोई में किफ़ायत घुसें तो मन बिगड़ जायेगा, कोई महेमान आये तो भी मन बिगड़ जाये कि चावल खतम हो जायेंगे! कोई बहुत फ़ज़ूलखर्ची हो, उसे हम कहें कि 'नॉबल' (उमदा) किफ़ायत कीजिए।

पैसे कमाने की भावना करने की जरूरत नहीं है, प्रयत्न भले ही चालू रहे। ऐसी भावना से क्या होता है कि, पैसे मैं खींच लूँ तो सामनेवाले

के हिस्से में रहेंगे नहीं। इसलिए जो कुदरती क्वोटा (हिस्सा) निर्माण हुआ है उसे ही हम कायम रखें। लोभ माने क्या? दूसरों का हड़प लेना। फिर कमाने की भावना करने की जरूरत ही क्या है? मरनेवाला है उसे मारने की भावना करने की क्या ज़रूरत? ऐसा कहना चाहता हूँ। इस एक वाक्य में, लोगों के कई पाप होते अटक जायें, ऐसा मैं समझाना चाहता हूँ!

लोभ को लेकर जो आचरण होता है न, वह आचरण ही उसे जानवरयोनि में ले जाये।

आप अच्छे मनुष्य हैं और यदि आप नहीं ठगे जायेंगे तो दूसरा कौन ठगा जानेवाला है? नालायक तो ठगा नहीं जायेगा। ठगे जायें तभी हमारी खानदानी कहलायेगी न!

इसलिए हम (दादाजी) लोभी द्वारा ठगे जायें। क्योंकि ठगे जाकर मुझे मोक्ष में जाना है। मैं यहाँ पैसे जमा करने नहीं आया हूँ। और मैं यह भी जानता हूँ कि वे नियम के अधीन ठगते हैं कि अनियम से। मैं यह जानकर बैठा हूँ इसलिए हर्ज नहीं।

मैं भोलेपन से नहीं ठगा गया। मुझे मालुम है कि ये सभी मुझे ठग रहे हैं। मैं जान-बूझकर ठगा जाऊँ। भोलेपन से ठगे जानेवाले पागल कहलाये। हम कहीं भोले होते होंगे? जो जान-बुझकर ठगे जायें, वे भोले होंगे क्या?

हमारे हिस्सेदार ने एक बार मुझ से कहा कि, 'आप के भोलेपन का लोग फ़ायदा उठाते हैं।' तब मैंने कहा कि, 'आप मुझे भोला समझते हैं, इसलिए आप ही भोले हैं। मैं समझकर ठगा जाता हूँ।' तब उन्हों ने कहा कि, 'मैं दुबारा ऐसा नहीं बोलूँगा।'

मैं जानू कि इस बेचारे की मति ऐसी है। उसकी नीयत ऐसी है। इसलिए उसे जाने दो। 'लेट गो' करो न! हम कषायों से मुक्त होने आये हैं। कषाय नहीं हो इसलिए हम ठगे जाते हैं, दूसरी बार भी ठगे जायें। जान-बूझकर ठगे जानेवाले कम होंगे न?

बचपन से ही मेरा प्रिन्सिपल (सिद्धांत) रहा है कि जान-बूझकर ठगा जाना। बाकी मुझे कोई मूर्ख बनाकर जायें और ठगकर जाये उस बात में क्या रखा है।

यह जान-बुझकर ठगे जाने से क्या हुआ? ब्रेन (दिमाग़) टॉप पर गया। बड़े-बड़े जजों का ब्रेन काम नहीं करे ऐसे हमारा ब्रेन काम करने लगा।

श्रीमद् राजचंद्र ने पुस्तक में लिखा है कि ज्ञानी पुरुष की तन-मन और धन से सेवा करना। तब किसी ने पूछा, 'भाई, ज्ञानी पुरुष को धन का क्या काम? वे तो किसी चीज़ के इच्छुक ही नहीं होते।' तब कहे, ऐसा नहीं, तन-मन से आप सेवा करते हैं मगर वे आपसे कहें कि यह अच्छी जगह धन डाल दें, तो आपकी लोभ की ग्रंथि टूट जायेगी। वरना आपका चित्त लक्ष्मी में ही रहा करेगा।

एक भाई मुझ से कहते हैं, 'मेरा लोभ निकाल दीजिए, मेरी लोभ की ग्रंथि इतनी बड़ी है! उसे निकाल दीजिए।' मैंने कहा, 'ऐसे निकालने से नहीं निकलेगी। वह तो कुदरती पचास लाख का घाटा होने पर लोभ की ग्रंथि अपने आप पिघल जायेगी।' कहेंगे, 'अब पैसे चाहिए ही नहीं!!'

अर्थात् यह लोभ की ग्रंथि तो घाटा आने पर जायेगी। भारी घाटा होने पर वह ग्रंथि फ़र्राटे से टूट जायेगी। वरना अकेली लोभ की ही ग्रंथि नहीं पिघले, दूसरी सभी ग्रंथियाँ पिघल जाये। लोभ के दो गुरुजी, एक ठग और दूसरा घाटा। घाटा होने पर लोभ की ग्रंथि फ़र्राटे से टूट जायेगी। और ठग हथेली में चाँद दिखानेवाले होते हैं, तब वह लोभी खुश हो जाये। फिर वे सारी पूँजी ही उड़ा ले जायें।

मुझसे लोग पूछते हैं कि, 'समाधि सुख कब बरतेगा?'। तब मैं कहता हूँ, 'जिसे कुछ भी नहीं चाहिए, लोभ की सारी ग्रंथियाँ छूट जायेगी, तब।' लोभ की ग्रंथि छूटने पर सुख बरता करे। बाकी ग्रंथिवाले को कोई सुख होता ही नहीं न! इसलिए औरों के लिए लूटा दीजिए, जितना औरों के लिए लूटायेंगे उतना आपका!

पैसे जितने आये उतने, अच्छे रास्ते पर खर्च कर दें वह सुखिया। उतने आपके खाते में जमा होंगे, वरना गटर में तो जायेंगे ही। यह मुंबई के सारे रुपये कहाँ जाते होंगे? वे सारे गटर में बहते रहते हैं। अच्छी राह खर्च हुए उतने रुपये हमारे साथ आते हैं। अन्य कोई साथ नहीं आता है।

तिरस्कार और निंदा है वहाँ लक्ष्मी नहीं रहती। लक्ष्मी कब प्राप्त नहीं होती? लोगों की बुराई और निंदा में पड़ें तब।

यह हमारा देश कब पैसेवाला होगा? कब लक्ष्मीवान और सुखी होगा? जब निंदा और तिरस्कार बंद हो जायेंगे तब। ये दोनों बंद हुए कि देश में पैसा ही पैसा होगा!

[६] लोभ की समझ, सूक्ष्मता से

प्रश्नकर्ता : किस प्रकार के दोष इतने भारी हों कि अवतारों तक चलें? कई अवतार करने पड़ें ऐसे दोष कौन से?

दादाश्री : लोभ! लोभ कई अवतारों तक साथ रहता है। लोभी होगा वह प्रत्येक अवतार में लोभी रहेगा, इसलिए उसे बहुत पसंद आये यह (लोभ)!

प्रश्नकर्ता : करोडों रुपये होने के बावजूद धर्म में पैसे नहीं दे सके उसका कारण क्या?

दादाश्री : बँधे हुए बंध कैसे छूटें? इसलिए कोई छूटेगा नहीं और बँधा का बँधा ही रहेगा। खुद खाये भी नहीं। किसके खातिर जमा करते हैं?! पहले तो साँप होकर चक्कर काटते थे। धन गाड़ते थे वहाँ साँप बनकर फिरते थे और रक्षा करते थे, 'मेरा धन, मेरा धन' करें!

जीना आया तो किसे कहलाये? अपने पास आया हो वह दूसरों के लिए लूटा दें। उसका नाम जीना आया कहलाये। पागलपन नहीं, सयानेपन से लूटा दें। पागलपन में शराब वगैरह पीते हो, उसमें बरकत नहीं आती। कोई व्यसन न हो और लूटायें (खर्चें)। यह पुण्यानुबंधी पुण्य कहलाये।

पुण्यानुबंधी पुण्य कौन-सा? प्रत्येक क्रिया में बदले की इच्छा नहीं करे वह पुण्यानुबंधी पुण्य! सामनेवाले को सुख पहुँचाते समय किसी भी प्रकार बदले की इच्छा नहीं रखे, उसका नाम पुण्यानुबंधी पुण्य।

प्रश्नकर्ता : पैसा साथ ले जाना हो तो, किस तरह ले जा सकते हैं?

दादाश्री : रास्ता तो एक ही है। जो हमारे रिश्तेदार न हो ऐसे परायों के दिल को ठंडक पहुँचायी हो, तो साथ आये। रिश्तेदारों को ठंडक पहुँचायी हो तो वह साथ नहीं आता, पर हिसाब चुकता हो जाये।

अथवा हम (दादाजी) से कहें तो लोगों का कल्याण हो ऐसा ज्ञान दान दिखाएँ। अर्थात् अच्छे पुस्तक छपवायें कि जो पढ़ने से कई लोग सही रास्ते पर आ जाये। हमसे पूछने पर हम बतायें। हमें लेना-देना नहीं होता।

लोभी ने ऐसा माना है कि पैसे संग्रह करूँगा तो मुझे सुख मिलेगा और फिर दुःख कभी नहीं आयेगा। पर वह संग्रह करते करते लोभी हो गया, खुद लोभी बन गया। किफ़ायत करनी है, इकोनोमी करनी है, पर लोभ नहीं करना है।

लोभ कैसे पैठे? उसकी शुरूआत कहाँ से होगी? पैसे नहीं होते उस घड़ी लोभ नहीं होता। पर यदि निनानवे (रुपये) हुए हो, तब मन में ऐसा हो कि आज घर में खर्च नहीं करेंगे पर एक रुपया बचाकर सौ पूरे करने हैं। यह लगा निनानवे का घक्का।। उस धक्के के बाद लोभ पाँच करोड होने पर भी नहीं छूटेगा। वह ज्ञानी पुरुष के धक्के से छूटेगा!

लोभी सुबह उठते ही लोभ करता रहे। सारा दिन उसी में जाये। कहेगा, भींडी महंगी है। बाल कटवाने में भी लोभ! आज बाईस दिन हुए है, पूरा महीना होने दो, कोई हर्ज नहीं होगा। आया समझ में? यह लोभ की ग्रंथि उसे बार-बार ऐसा दिखाती रहे और कषाय होते रहें। कपट और लोभ दोनों बहुत विकट है।

पाँच-पचास रुपये हाथ में होने पर भी खर्च नहीं करेगा। शरीर चलता नहीं हो तब भी रिक्शे पर खर्च नहीं करेगा। एकबार मैंने उसे कहा कि, ऐसा करो, कुछ रुपये रिक्शे में खर्च किया करो। तब वह कहे कि खर्च ही नहीं कर पाता। पैसे देने का संजोग हुआ कि खाना नहीं भाये। अब वहाँ हिसाब से तो मुझे भी मालूम पड़े कि यह गलत है। पर क्या हो सकता है? प्रकृति 'नहीं' कहती है। तब एक बार मैंने उसे कहा कि पैसों की रेज़गी (सिक्के) लीजिए और रास्ते में बिखेरते हुए आइये! तब एक दिन थोड़े बिखेरे, फिर नहीं बिखेरे।

ऐसे दो-चार बार बिखेरने पर हमारा मन क्या कहेगा कि यह (चन्दुभाई) हमारे अंकुश में नहीं रहे, हमारी सुनते नहीं हैं। तो ऐसा करने पर हमारे मन आदि का परिवर्तन हो जाये। मन आदि जो कहते हों, हमें उससे उलटा करना पड़ें तभी वे हमारे अंकुश में रहें।

लोभ की ग्रंथि माने क्या? कहाँ कितने हैं? वहाँ कितने हैं? यही लक्ष में रहा करे। बैंक में इतने हैं, उसके वहाँ इतने हैं, अमुक जगह पर इतने हैं, यही लक्ष में रहा करे। 'मैं आत्मा हूँ' यह उसे लक्ष में नहीं रहेगा। वह लोभ का लक्ष टूट जाना चाहिए। 'मैं आत्मा हूँ' यही लक्ष रहना चाहिए।

लोभी तो स्वभाव से ही ऐसा होता है कि किसी भी रंग में नहीं रंगायेगा। उस पर कोई रंग नहीं चढ़ता। अगर कोई लोभी हो तो आप इतना देखा लेना कि उस पर कोई रंग नहीं चढ़ता! लाल रंग में डुबोयें तो भी पीला का पीला! हरे रंग में डुबोयें तब भी पीला ही पीला!

बिना लोभ वाले सभी हमारे रंग में रंगें जायें। किन्तु लोभी तो हँसे यानी हमें ऐसा लगें कि रंग गया। मैं जो बात कहूँ वह सारी बात सुनें। बहुत अच्छी बात, बहुत आनंद की बात, ऐसा-वैसा कहे, लेकिन भीतर तन्मयाकार नहीं होता। अर्थात् दूसरे लोग घर-बार भूल जाये पर वह नहीं भूलता। उसका लोभ नहीं भूलता। अभी उनके साथ उनकी गाड़ी में जाऊँगा तो पाँच बचेंगे, यह भूले नहीं। दूसरे तो पाँच बचाना भूल जायें। बाद में जायेंगे, ऐसा कहें। जबकि वह कुछ नहीं भूले। वह रंगाया नहीं

कहलाये। रंगाया कब कहलाये कि तन्मयाकार हो जाये पूरा, घर-बार सब भूल जायें। आप नहीं समझे? यह लोग नहीं कहते कि दादाजी का रंग लगा? उसको दादाजी का रंग नहीं लगता, चाहे कितनी ही बार उसे रंग में डूबो-डूबो करें तब भी।

मन में पैसे देने का भाव हो तब भी दे नहीं पाये वह लोभ की ग्रंथि।

प्रश्नकर्ता : संयोग ही ऐसे हो कि देने का भाव होने पर भी नहीं दे सकते।

दादाश्री : वह अलग बात है। वह तो हमें ऐसा लगे कि संयोग ऐसे हैं, पर ऐसा होता नहीं है। देने का निश्चय करने पर दे सके ऐसा है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, मगर होने पर भी नहीं देते।

दादाश्री : होने पर भी नहीं दे सकते, दे ही नहीं सकते न, वह बंध तो टूटे नहीं। वह बंध टूट जाये तो मोक्ष हो जाये न। ! वह आसान वस्तु नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वैसे तो अपनी-अपनी मर्यादा में देने की अमुक शक्ति तो होती ही है न?

दादाश्री : नहीं, वह लोभ के कारण नहीं होती। लोभी के पास लाख रुपये होने पर भी, चार आने देना भी मुश्किल हो जाये। बुखार चढ़ जाये। अरे, पुस्तक में पढ़े कि ज्ञानी पुरुष की तन, मन, धन से सेवा करनी चाहिए। वह पढ़ते समय बुखार चढ़ जाये कि ऐसा क्यों कर लिखा है।

लोभ टूटने के दो रास्ते। एक, ज्ञानी पुरुष तुड़ा दें, अपने वचन बल से। और दूसरा, जबरदस्त घाटा आने पर लोभ छूट जाये कि मुझे कुछ करना नहीं है, अब जो बचे हैं उनसे निबाह लेना है। मुझे कई लोगों से कहना पड़ता है कि घाटा आने पर लोभ छूटेगा, वरना लोभ छूटनेवाला नहीं। हमारे कहने पर भी नहीं छूटे, ऐसी दोहरी ग्रंथि पड़ गई होती है।

लोभी की ग्रंथि घाटे से खूलेगी। अथवा यदि ज्ञानी पुरुष की आज्ञा मिल जाये तो उत्तम। फिर आज्ञा पालन को तैयार नहीं हो उसे कौन सुधारेगा?

सत्संग में रहने पर ही ग्रंथियाँ पिघलेगी, सत्संग का परिचय ना हो वहाँ तक ग्रंथियों का पता नहीं चलता। सत्संग में रहने से वह निर्मल होती नज़र आये। 'हम' (आत्मा) दूर रहें न! दूर रहकर सब देखें आराम से। इससे हमारे (चन्दूभाई के) सारे दोष नज़र आये। 'हम' अलग नहीं रहें तब वह ग्रंथि में रहकर देखते हैं, इसलिए दोष नहीं दिखते। तभी कृपालुदेव ने कहा, 'दिखे नहीं निज दोष तो तैरिए कौन उपाय!'

हमारा जीवन किसी के लाभ के लिए व्यतीत होना चाहिए। यह मोमबत्ती जलती है वह क्या खुद के प्रकाश के लिए जलती है? औरों के लिए, परार्थ जलती है न? औरों के फ़ायदे के लिए जलती है न? इसी प्रकार ये मनुष्य औरों के फ़ायदे (कल्याण) के लिए जीयें तो खुद का फ़ायदा (कल्याण) तो उसमें निहित ही है। मरना तो है ही एक दिन। इसलिए औंरो का फ़ायदा करने जायेंगे तो आपका फायदा उसमें निहित ही है। और औरों को कष्ट पहुँचाने चायें तो खुद को कष्ट है ही अंदर। खुद जो चाहें सो करें।

आत्मा प्राप्त करने हेतु जो कुछ किया जाये वह मेन प्रोडक्शन है, और उसके कारण बाय-प्रोडक्शन प्राप्त होता है, जिससे सारी संसारी जरूरतें प्राप्त होती है। मैं अपना एक ही तरह का प्रोडक्शन रखता हूँ, 'संसार सारा परम शान्ति पायें और कुछ मोक्ष पायें।' मेरा यह प्रोडक्शन और उसका बाय-प्रोडक्शन मुझे मिलता ही रहता है। हमें अलग तरह के चाय-पानी आतें हैं उसकी क्या वजह? आपकी तुलना में मेरा प्रोडक्शन उच्च कोटि का है। वैसे ही आपका प्रोडक्शन उच्च कोटी का होगा तो बाय-प्रोडक्शन भी उच्च कोटी का आयेगा!

हमें केवल हेतु बदलना है, और कुछ नहीं करना है। पंप के इंजन का एक पट्टा इस ओर देने पर पानी निकलेगा और उस ओर पट्टा दिया

तो धान में से चावल निकलेंगे, अर्थात् खाली पट्टा देने का फ़र्क मात्र है। हेतु निश्चित करना है और वह हेतु हमें लक्ष में रहना चाहिए। बस, और कुछ नहीं है। लक्ष्मी लक्ष्य में नहीं रहनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : लक्ष्मी का सदुपयोग किसे कहलाये?

दादाश्री : लोगों के उपयोग हेतु या भगवान हेतु खर्च करें वह सदुपयोग कहलाये।

प्रश्नकर्ता : लक्ष्मी टीकती नहीं तो क्या करना?

दादाश्री : लक्ष्मी तो टीकनेवाली नहीं। पर उसका रास्ता बदल देना। दूसरे रास्ते जाती हो तो उसका प्रवाह बदल देना और धर्म के रास्ते मोड़ देना। जितनी सुमार्ग पर गई उतनी सही। भगवान आये फिर लक्ष्मी टीके, उसके सिवा लक्ष्मी कैसे टीकेगी?

पैसे खोटे रास्ते पर गये तो कंट्रोल (वश) कर देना और पैसे सही रास्ते खर्च हो तो डीकंट्रोल (खुला) कर देना।

यह भाईजी किसी एक व्यक्ति को दान कर रहे हैं वहाँ पर कोई बुद्धिमान कहे कि, 'अरे, इसे क्यों देते हो?' तब यह कहेंगे, 'अब देने दीजिए न, गरीब है।' ऐसा कहकर दान करते हैं और वह गरीब ले लेता है। पर वह बुद्धिमान बोला उसका उसे अंतराय हुआ। इससे फिर उसको दुःख में कोई दाता नहीं मिलेगा।

[७] दान के प्रवाह

अब हम तो पश्चाताप से सब मिटा सकें और मन में तय करें कि ऐसा नहीं बोलना चाहिए और बोल दिया उसकी क्षमा चाहता हूँ, तो मिट जायेगा। क्योंकि वह खत पोस्ट में डाला नहीं है, उससे पहले लिखाई बदल देते हैं कि पहले हमने सोचा था दान नहीं करना चाहिए वह गलत है पर अब हमारे विचार में दान करना सही है, इससे उसके आगे का मिट जायेगा।

खरे वक्त पर तो धर्म अकेला ही आपकी मदद में खड़ा रहेगा। इसलिए लक्ष्मीजी को धर्म के प्रवाह में बहने दीजिए।

पैसों का स्वभाव कैसा है? चंचल है, इसलिए आयेंगे और एक दिन फिर चले जायेंगे। इसलिए पैसे लोगों के कल्याण हेतु खर्च करना। जब आपका खराब उदय आया हो तो लोगों को दिया ही आपकी हेल्प करेगा, इसलिए पहले से समझना चाहिए। पैसे का सद्व्यय तो करना ही चाहिए न?

दान के चार प्रकार हैं :

एक आहारदान, दूसरा औषधदान, तीसरा ज्ञानदान और चौथा अभयदान।

ज्ञानदान में पुस्तकें छपवाना, सही राह ले जाये और लोगों का कल्याण हो ऐसी पुस्तकें छपवाना, यह ज्ञानदान। ज्ञानदान करने से अच्छी गतियाँ, उच्च गतियाँ प्राप्त करे अथवा तो मोक्ष में जाये।

अर्थात् भगवान ने ज्ञानदान को प्राथमिकता दी है और जहाँ पैसों की जरूरत नहीं वहाँ पर अभयदान की बात कही है। जहाँ पैसों का लेन-देन है, वहाँ पर यह ज्ञानदान का निर्देश है और साधारण स्थिति, नरम स्थिति के लोगों को औषधदान और आहारदान का निर्देश किया है।

और चौथा अभयदान। अभयदान तो कोई जीव मात्र को त्रास नहीं हो ऐसा वर्तन रखना, वह अभयदान!

प्रश्नकर्ता : आज के जमाने में धर्म में दो नंबर का पैसा खर्च होता है, तो इससे लोगों को पुण्य उपार्जन होगा क्या?

दादाश्री : अवश्य होगा न! उसने त्याग किया न उतना (दान दिया)! अपने पास आये का त्याग किया न! पर उसमें हेतु अनुसार पुण्य मिलेगा, हेतु लक्षी! पैसे दिये यह एक ही बात नहीं देखी जाती। पैसों का त्याग यह निर्विवाद है। बाकी पैसे कहाँ से आये? हेतु क्या है? यह सब

प्लस-माइनस होकर जो बाकी बचेगा वह उसका। उसका हेतु क्या कि सरकार ले जायेगी उसके बजाय इसमें डाल दो न!

प्रश्नकर्ता : लोग लक्ष्मी का संग्रह करे, यह हिंसा कहलाये कि नहीं?

दादाश्री : हिंसा ही कहलाये। संग्रह करना यह हिंसा है। दूसरे लोगों के काम नहीं आती न!

प्रश्नकर्ता : कुछ पाने की अपेक्षा से जो दान करते हैं, उसकी भी शास्त्रों में मनाई नहीं? उसकी निंदा नहीं करते?

दादाश्री : ऐसी अपेक्षा नहीं रखना उत्तम है। अपेक्षा रखने पर तो वह दान निर्मूल हो गया, सत्वहीन हो गया कहलाये। मैं तो कहता हूँ कि पाँच ही रुपये दीजिए पर बिना अपेक्षा के।

कोई धर्म के नाम पर लाख रुपये दान करे और तख्ती लगवायें और कोई मनुष्य एक ही रुपया धर्म के नाम पर देता है तो उसकी क़िमत ज्यादा है, फिर भले ही एक रुपया दिया हो। और यह तख्ती लगवाई वह, आपका पुण्य कीर्ति में खर्च हो गया, जो धर्म के नाम पर दिया उसके एवज उसने तख़्ती लगवाकर ले लिया। और जिसने एक ही रुपया दिया होगा पर उसकी वसुली नहीं की है इसलिए उसका बैलेन्स बाकी रहा।

प्रश्नकर्ता : पुण्य के उदय से जरूरत से ज्यादा लक्ष्मी की प्राप्ति हो तब क्या करना?

दादाश्री : तब खर्च कर देना। बच्चों के लिए ज्यादा मत रखना। उनको पढ़ाना-लिखाना, सब कम्पलिट (पूरा) करके उनको नौकरी पर लगा दिया अर्थात् फिर वे कमाने लग गये, इसलिए ज्यादा मत रखना। थोडे-बहुत बैंक आदि किसी जगह रख छोड़ना, जो कभी मुश्किल में आने पर उन्हें दे सकें। उनको बताना नहीं कि भाई मैंने रख छोड़े हैं। वरना मुश्किल में नहीं आते होंगे फिर भी आयेंगे।

एक मनुष्यने मुझ से प्रश्न किया कि, 'बच्चों को कुछ नहीं देना क्या?' मैंने कहा, 'बच्चों को देना जरूर, हमारे पिताने जो हमें दिया हो वह सारा दे देना पर खुद ने जो कमाया है वह अपना। उसे हम चाहे वहाँ धर्म के नाम पर खर्च कर दें।'

प्रश्नकर्ता : हम वकीलों का कानून भी यही कहता है कि बाप-दादा की प्रोपर्टी (मिल्कियत) हो वह बच्चों को देनी ही पड़े और खुद की कमाई का जो चाहे सो करे।

दादाश्री : हाँ, जो चाहे सो करे। अपने हाथों ही कर लेना! हमारा मार्ग क्या कहता है कि अपना खुद का हो वह माल तू अलग करके उपयोग में ले, तो वह तेरे साथ आयेगा। क्योंकि यह ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् अभी एक-दो अवतार बाकी रहे हैं, इसलिए साथ में होना चाहिए न!

प्रश्नकर्ता : अगले जन्म के पुण्य उपार्जन के लिए इस जन्म में क्या करना?

दादाश्री : इस जन्म में जो पैसे आये, उसका पाँचवा हिस्सा भगवान के यहाँ मंदिर में दान करना। पाँचवा हिस्सा लोगों के सुख के लिए खर्च करना। अर्थात् उतना तो वहाँ पर ऑवरड्राफट पहुँचा! यह पिछले अवतार का ऑवरड्राफट तो भोगते हो। इस जन्म का पुण्य है वह फिर आगे आयेगा। आज की कमाई आगे काम आयेगी।

[८] लक्ष्मी और धर्म

मोक्षमार्ग में दो चीज़ें नहीं होती। स्त्री संबंधी विचार और लक्ष्मी संबंधी विचार! जहाँ स्त्री का विचार होगा वहाँ धर्म तो होगा ही नहीं और लक्ष्मी का विचार होगा वहाँ भी धर्म नहीं होगा। उन दो मायाओं की वज़ह से तो यह संसार खड़ा रहा है। इसलिए वहाँ धर्म खोजना यह भूल है। तब वर्तमान में बिना लक्ष्मी के कितने केन्द्र चल रहें हैं?

और तीसरा क्या? सम्यक् दृष्टि होनी चाहिए।

इसलिए जहाँ लक्ष्मी और स्त्री संबंध हो वहाँ पर खड़े नहीं रहना। सोच-समझकर गुरु बनाना। लीकेजवाला (बगैर निष्ठा का) हो तो मत करना।

जिसकी सर्वस्व प्रकार की भीख गई उसे इस संसार के सारे रहस्य का ज्ञान प्राप्त होता है, पर भीख जाये तब न! कितने प्रकार की भीख, लक्ष्मी की भीख, कीर्ति की भीख, विषयों की भीख, शिष्यों की भीख, मंदिर बाँधने की भीख, सारी भीख, भीख और भीख है! वहाँ हमारी दरिद्रता कैसे मिटे?

एक व्यक्ति मुझ से कहे कि, 'उसमें दुकानदार का दोष कि ग्राहक का दोष?' मैंने कहा, 'ग्राहक का दोष!' दुकानदार तो चाहे सो दुकान निकालकर बैठ जायेगा, हमें समझना नहीं चाहिए?

संत पुरुष तो पैसे लेते नहीं। दुखिया है इसलिए तो वह आपके पास आया और ऊपर से उसके सौ छीन लिए! किसी ने हिन्दुस्तान को खतम किया हो तो ऐसे संतों ने खतम किया है। संत तो उसका नाम कहलाये कि जो अपना सुख दूसरों को बाँटते हो, सुख लेने नहीं आये होते।

यह संघ इतना परिशुद्ध है कि जिसमें मैं (दादाजी) तो अपने घर के कपड़े-धोती पहनता हूँ। संघ के पहनता होता तो चार सौ-चार सौ के मिले न? अरे, मैं तो नहीं लेता, मगर यह (नीरू)बहन भी नहीं लेतीं! यह बहन भी मेरे साथ रहती हैं और वह कपड़े अपने घर के पहनती हैं।

इस दुनिया में जितनी स्वच्छता उतनी दुनिया आपकी, आप मालिक है इस दुनिया के! जितनी आपकी स्वच्छता!! मैं इस देह का छब्बीस साल से मालिक नहीं रहा, इसलिए हमारी स्वच्छता पूर्णतया होगी। इसलिए स्वच्छ हो जाइये, स्वच्छ!

स्वच्छता माने इस दुनिया की किसी चीज़ की ज़रूरत ही नहीं होती, भिखारीपन ही नहीं होता!

अब भी पछतावा करोगे तो इसी देह से पाप भस्मीभूत कर सकोगे। पछतावे का ही सामायिक कीजिए। किसका सामायिक? पछतावे का सामायिक, क्या पछतावा? तब कहे, मैंने लोगों से गलत पैसे लिए वे सभी जिसके लिए हो उसका नाम देकर, उसका चेहरा याद करके, व्यभिचार आदि किया हो, दृष्टि बिगाड़ी हो वे सभी पाप धोना चाहो तो अब भी धो सकते हो।

लोगों का कल्याण तो कब होगा? हम बिलकुल स्वच्छ हो जायें तब! प्यॉरिटी (शुद्धता) ही सभी को, सारे संसार को आकर्षित करे। इमप्यॉरिटी (अशुद्धता) संसार को फ्रेक्चर कर डालें। इसलिए प्यॉरिटी लायें।

- जय सच्चिदानंद

प्रातः विधि

- श्री सीमंधर स्वामी को नमस्कार करता हूँ। (५)
- वात्सल्यमूर्ति 'दादा भगवान' को नमस्कार करता हूँ। (५)
- प्राप्त मन-वचन-काया से इस संसार के किसी भी जीव को किंचित्मात्र भी दुःख न हो, न हो, न हो। (५)
- केवल शुद्धात्मानुभव के अलावा इस संसार की कोई भी विनाशी चीज मुझे नहीं चाहिए। (५)
- प्रकट ज्ञानी पुरुष दादा भगवान की आज्ञा में ही निरंतर रहने की परम शक्ति प्राप्त हो, प्राप्त हो, प्राप्त हो। (५)
- ज्ञानी पुरुष 'दादा भगवान' के वीतराग विज्ञान का यथार्थ रूप से, संपूर्ण-सर्वांग रूप से केवल ज्ञान, केवल दर्शन और केवल चारित्र में परिणमन हो, परिणमन हो, परिणमन हो। (५)

नौ कलमें

१. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा की किंचित्मात्र भी अहम् न दुभे (दुःखे), न दुभाया (दुःखाया) जाये या दुभाने (दुःखाने) के प्रति अनुमोदना न की किया जाये, ऐसी परम शक्ति दो।

मुझे किसी देहधारी जीवात्मा का किंचित्मात्र भी अहम् न दुभे, ऐसी स्याद्वाद वाणी, स्याद्वाद वर्तन और स्याद्वाद मनन करने की परम शक्ति दो।

२. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी धर्म का किंचित्मात्र भी प्रमाण न दुभे, न दुभाया जाये या दुभाने के प्रति अनुमोदना न की जाये, ऐसी परम शक्ति दो।

मुझे किसी भी धर्म का किंचित्मात्र भी प्रमाण न दुभाया जाये ऐसी स्याद्वाद वाणी, स्याद्वाद वर्तन और स्याद्वाद मनन करने की परम शक्ति दो।

३. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी उपदेशक साधु, साध्वी या आचार्य का अवर्णवाद, अपराध, अविनय न करने की परम शक्ति दो।

४. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा के प्रति किंचित्मात्र भी अभाव, तिरस्कार कभी भी न किया जाये, न करवाया जाये या कर्ता के प्रति न अनुमोदित किया जाये, ऐसी परम शक्ति दो।

५. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा के साथ कभी भी कठोर भाषा, तंतीली भाषा न बोली जाये, न बुलवाई जाये या बोलने के प्रति अनुमोदना न की जाये, ऐसी परम शक्ति दो।

कोई कठोर भाषा, तंतीली भाषा बोलें तो मुझे मृदु-ऋजु भाषा बोलने की शक्ति दो ।

६. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा के प्रति स्त्री, पुरुष या नपुंसक, कोई भी लिंगधारी हो, तो उसके संबंध में किचिंत्मात्र भी विषय-विकार संबंधी दोष, इच्छाएँ, चेष्टाएँ या विचार संबंधी दोष न किये जायें, न करवाये जायें या कर्ता के प्रति अनुमोदना न की जाये, ऐसी परम शक्ति दो। मुझे निरंतर निर्विकार रहने की परम शक्ति दो।

७. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी रस में लुब्धता न हो ऐसी शक्ति दो। समरसी आहार लेने की परम शक्ति दो।

८. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष, जीवित अथवा मृत, किसी का किंचित्मात्र भी अवर्णवाद, अपराध, अविनय न किया जाये, न करवाया जाये या कर्ता के प्रति अनुमोदना न की जायें, ऐसी परम शक्ति दो।

९. हे दादा भगवान ! मुझे जगत कल्याण करने में निमित्त बनने की परम शक्ति दो, शक्ति दो, शक्ति दो।

(इतना आप दादा भगवान से माँगा करें। यह प्रतिदिन यंत्रवत् पढ़ने की चीज़ नहीं है, हृदय में रखने की चीज़ है। यह प्रतिदिन उपयोगपूर्वक भावना करने की चीज़ है। इतने पाठ में समस्त शास्त्रों का सार आ जाता है।)

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

हिन्दी

१. ज्ञानी पुरूष की पहचान
२. सर्व दु:खों से मुक्ति
३. कर्म का विज्ञान
४. आत्मबोध
५. मैं कौन हूँ ?
६. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
७. भूगते उसी की भूल
८. एडजस्ट एवरीव्हेयर
९. टकराव टालिए
१०. हुआ सो न्याय
११. चिंता
१२. क्रोध
१३. प्रतिक्रमण
१४. दादा भगवान कौन ?
१५. पैसों का व्यवहार

English

1. **Adjust Everywhere**
2. **The Fault of the Sufferer**
3. **Whatever has happened is Justice**
4. **Avoid Clashes**
5. **Anger**
6. **Worries**
7. **The Essence of All Religion**
8. **Shree Simandhar Swami**
9. **Pure Love**
10. **Death : Before, During & After...**
11. **Gnani Purush Shri A.M.Patel**
12. **Who Am I ?**
13. **The Science of Karma**
14. **Ahimsa (Non-violence)**
15. **Money**
16. **Celibacy : Brahmcharya**
17. **Harmony in Marriage**
18. **Pratikraman**
19. **Flawless Vision**
20. **Generation Gap**
21. **Apatvani-1**
22. **Noble Use of Money**
23. **Life Without Conflict**
24. **Spirituality in Speech**
25. **Trimantra**

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी बहुत सारी पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में दादावाणी मेगेज़ीन प्रकाशित होता है।

प्राप्तिस्थान

दादा भगवान परिवार

अडालज : त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सीटी, अहमदाबाद- कलोल हाईवे, पोस्ट : अडालज, जि. गांधीनगर, गुजरात - ३८२४२१.
फोन : (०७९) ३९८३ ०१००
E-mail : info@dadabhagwan.org

अहमदाबाद : दादा दर्शन, ५, ममतापार्क सोसायटी, नवगुजरात कॉलेज के पीछे, उस्मानपुरा, अहमदाबाद-३८००१४.
फोन : (०७९)२७५४०४०८, २७५४३९७९

राजकोट : त्रिमंदिर, अहमदाबाद-राजकोट हाई वे, तरघडीया चोकडी, पोस्ट : मालियासण, जी. राजकोट. फोन : ९९२४३ ४३४१६

मुंबई : श्री मेघेश छेडा, फोन : (०२२) २४११३८७५

बेंग्लोर : श्री अशोक जैन, ९३४१९४८५०९

कोलकत्ता : श्री शशीकांत कामदार, ०३३-३२९३३८८५

U.S.A. : **Dada Bhagwan Vignan Institue : Dr. Bachu Amin,**
100, SW Redbud Lane, Topeka, Kansas 66606.
Tel : 785-271-0869, **E-mail :** bamin@cox.net
Dr. Shirish Patel, 2659, Raven Circle, Corona, CA 92882
Tel. : 951-734-4715, **E-mail :** shirishpatel@sbcglobal.net

U.K. : **Dada Centre**, 236, Kingsbury Road,
(Above Kingsbury Printers), Kingsbury, London, NW9 0BH
Tel. : 07956476253, E-mail: dadabhagwan_uk@yahoo.com

Canada : **Dinesh Patel,** 4, Halesia Drive, Etobicock,
Toronto, M9W 6B7. Tel. : 416 675 3543
E-mail: ashadinsha@yahoo.ca

Website : www.dadabhagwan.org, www.dadashri.org